

UNIVERSAL
LIBRARY

OU_182574

UNIVERSAL
LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. ¹¹81.0.8

Accession No. P.G.H 2208

Author A 31-

Title 31.411 21 C11 C1

41.21 - 21.11.11

This book should be returned on or before the date
last marked below.



प्रथम आकाशवाणी सर्वभाषा कवि-सम्मेलन का एक विहंगम दृश्य

आकाशवाणी काव्य-संगम

१

MA Graduate Library
Dept of Arts & Commerce. O. A.



प बिल के श न्स डि वी ज न
सूचना और प्रसार मंत्रालय
ग्रोल्ड सेक्टोरिएट
दिल्ली-८

अप्रैल १९५७

मूल्य एक रुपया

मुद्रक : एलबियन प्रेस, कश्मीरी गेट, दिल्ली

अनुक्रम

आमुख	५
भारत की सांस्कृतिक एकता	डा० बालकृष्ण केसकर
भाषाओं का आपसी सम्बन्ध	श्री जवाहरलाल नेहरू
संस्कृत	१२
श्री महादेव पाण्डेय	
रूपान्तरकार : श्रीमती इंदुजा अवस्थी	
असमिया	१४
श्रीमती नलिनी बाला देवी	
रूपान्तरकार : श्री हंसकुमार तिवारी	
उड़िया	१८
डा० मायाधर मानसिंह	
रूपान्तरकार : श्री प्रभाकर माचवे	
उर्दू	२६
श्री रविश सिद्दीकी	
रूपान्तरकार : श्री ओंकारनाथ श्रीवास्तव	
कन्नड़	२८
श्री द० रा० बेन्द्रे	
रूपान्तरकार : श्री नरेन्द्र शर्मा	
कश्मीरी	३३
श्री रहमान राही	
रूपान्तरकार : डा० हरिवंशराय बच्चन	
गुजराती	३६
श्री उमाशंकर जोशी	
रूपान्तरकार : श्री नरेन्द्र शर्मा	

तमिल

४१

श्री सुब्रह्मण्य योगी

रूपान्तरकार : श्री सुमित्रानन्दन पन्त

तेलुगु

४६

श्री देवुलपुल्ल कृष्ण शास्त्री

रूपान्तरकार : श्री सुमित्रानन्दन पन्त

पंजाबी

४६

श्रीमती अमृता प्रीतम

रूपान्तरकार : डा० हरिवंशराय वच्चन

बंगला

५२

श्री बुद्धदेव वसु

रूपान्तरकार : श्री हंसकुमार तिवारी

मराठी

५८

श्री यशवन्त दिनकर पेंढारकर

रूपान्तरकार : श्री प्रभाकर माचवे

मलयालम

श्री जी० शंकर कुरुप्प

रूपान्तरकार : श्री रामधारी सिंह 'दिनकर'

हिन्दी

७३

श्री मैथिलीशरण गुप्त

श्री बालकृष्ण शर्मा 'नवीन'

श्री सुमित्रानन्दन पन्त

श्री रामधारीसिंह 'दिनकर'

आमुख

गणतंत्र-दिवस के अवसर पर राजधानी में जहाँ अन्य अनेक समारोह होते रहे हैं वहाँ इस बात का अनुभव हुआ कि इसमें कवि-गिरा का योग भी होना आवश्यक है। यह गिरा दिग्दिगंत में गूँजे, इसके लिए आकाशवाणी से अच्छा कौन माध्यम हो सकता था ?

अतएव विगत २५ जनवरी, १९५६, को एक अखिल-भारतीय कवि-सभा का आयोजन हुआ जिसका उद्घाटन प्रधानमंत्री तथा साहित्य अकादेमी के आपति श्री जवाहरलाल नेहरू ने किया।

इस अवसर पर भारतीय विधान में गिनाई गई सभी प्रमुख भारतीय भाषाओं के शीर्ष कविगण उपस्थित थे। यह पहला अवसर था, कदाचित् भारतीय इतिहास में पहला अवसर था, जब कि एक मंच पर एकत्र होकर चौदह भारतीय भाषाओं के कवियों ने अपनी अमृतवाणी का सुख श्रोताओं को दिया। हिन्दी कवियों ने इतर भाषाओं के कवियों के प्रति अपनी श्रद्धांजलि के रूप में उनकी कविताओं के पद्यानुवाद प्रस्तुत किए।

इस स्मरणीय अवसर की स्मृति जगाए रखने के उद्देश्य से, वहाँ पढ़ी गई मूल तथा अनूदित कविताओं का संग्रह प्रस्तुत ^१।

समारोह में संस्कृत और उर्दू कविताओं के अनुवाद नहीं पढ़े गए थे। पाठकों के लाभ के लिए इस संग्रह में उनके गद्यानुवाद दे दिए गए हैं। उडिया-कवि डा० मायाधर मानसिंह उपस्थित नहीं हो सके थे, उनकी कविता पढ़ दी गई थी।



सूचना और प्रसार मंत्री
डा० बालकृष्ण केसकर

भारत की सांस्कृतिक एकता

डा० केसकर का स्वागत भाषण

आज आल इंडिया रेडियो की तरफ से आप सबका मैं यहाँ हार्दिक स्वागत करता हूँ।

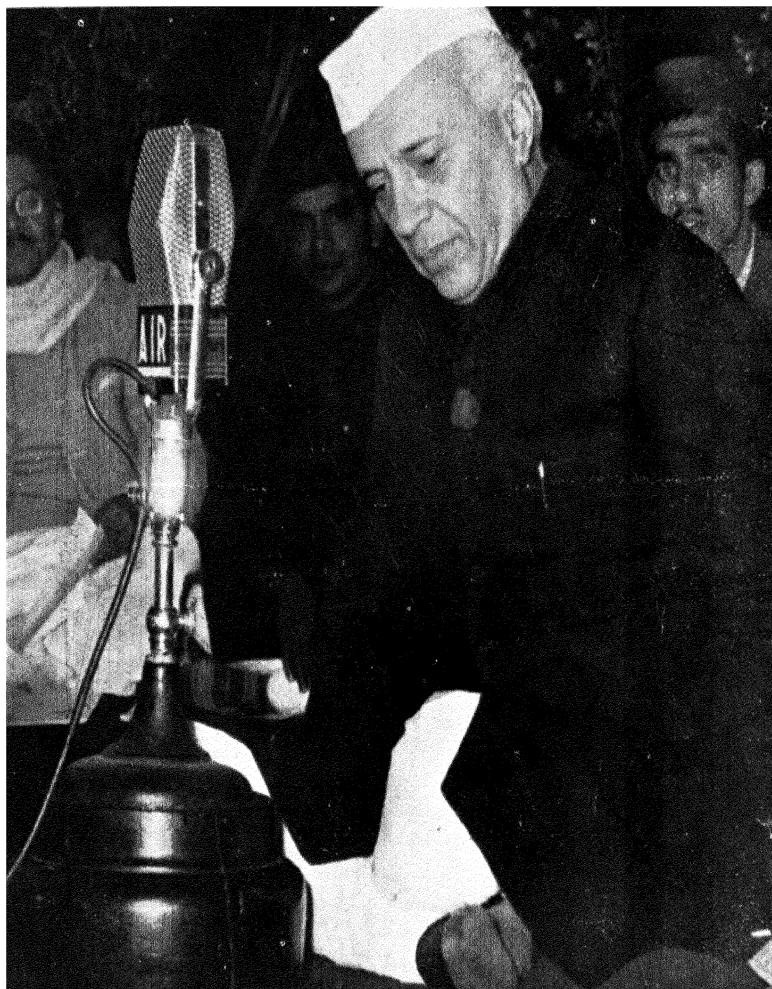
आल इंडिया रेडियो पिछले तीन चार साल से भारत की सांस्कृतिक एकता के बारे में लगातार कोशिश कर रहा है। रेडियो के लिए यह फ़ख्र है कि अगर आज किसी ने हमारी भाषाओं को बनाने में, उनका साहित्य बढ़ाने में, ज़्यादा से ज़्यादा मदद की होगी तो वह रेडियो ने की है। आज ऐसी बहुत सी हमारी भाषाएँ हैं कि जिनकी पिछले कई सालों की प्रगति केवल रेडियो की वजह से है। आज रेडियो ही एक माध्यम है जो ज़्यादातर अपना काम हमारी भाषाओं में करता है, अंग्रेज़ी में नहीं करता। पिछले तीन चार साल में हम लगातार इस कोशिश में हैं कि भारत की जो अलग-अलग भाषाएँ हैं उनको नज़दीक लाकर भारत की एकता को और मज़बूत किया जाये। इसलिए अलग-अलग भाषाओं की जो रचनाएँ हैं, जो किताबें हैं, जो कविताएँ हैं, उनको दूसरी भाषाओं में तर्जुमा करना या अनुवाद करना, उनकी जो अच्छी से अच्छी किताबें हैं उनको दूसरी भाषाओं में करना, और रेडियो के ज़रिये उनका प्रकाशन करना, यह लगातार जारी है। हम कह सकते हैं कि इस तरीक़े से रेडियो भारत की अलग-अलग भाषाओं को एक दूसरे के पास लाकर देश की एकता को मज़बूत कर रहा है। यह देश की सांस्कृतिक एकता के लिए सबसे बड़ा और ज़रूरत से अधिक साधन है।

इससे अच्छा क्या हो सकता है कि आज गणतन्त्र-दिवस के साथ रेडियो भी हमारी भाषाओं के अच्छे से अच्छे और उज्ज्वल से उज्ज्वल प्रतिनिधियों को एक साथ लाकर हमारी संस्कृति की जो विविधता है, जो विचित्रता है, और जो एकता है, उसको एक साथ ही दिखला दे ?

गुज़री की बात है कि हमारे प्रधानमंत्री आज यहाँ उपस्थित हैं और

उन्होंने इस कार्य के लिए अपने बहुमूल्य समय में से थोड़ा सा दे दिया है। आज अगर हमने उनको आमंत्रित किया है तो वह केवल बहैसियत प्रधान मंत्री के ही नहीं बल्कि बहैसियत साहित्य अकादेमी के चेयरमैन के भी। हम सब जानते हैं कि सांस्कृतिक कामों में उनकी दिलचस्पी कितनी गहरी है और अगर आज हमारे देश में सांस्कृतिक कामों के बारे में कुछ प्रगति हुई है, कुछ दिलचस्पी बढ़ी है, तो उसमें बहुत कुछ स्फूर्ति उनकी है। मैं उनसे प्रार्थना करूंगा कि वह यहां चन्द शब्द कह कर आए हुए कवियों को और हम सब को उत्साहित करें।





प्रधानमंत्री तथा साहित्य अकादेमी के सभापति
श्री जवाहरलाल नेहरू

भाषाओं का आपसी सम्बन्ध

श्री जवाहरलाल नेहरू का उद्घाटन भाषण

आज हम यहां जमा हुए हैं, इस कवि सम्मेलन में, जिसमें भारत के अनेक भाषाओं के कवि हैं। थोड़ी देर में आप उनकी कविता सुनेंगे।

आप मुझसे पूछें कि ऐसी कवियों की विरादरी में तुम कैसे पहुँच गए ? तो बात तो यह है कि इसका मेरे पास कोई माकूल जवाब नहीं है, क्योंकि उमर भर में मैंने किसी भाषा में भी कभी कविता नहीं लिखी है। फिर भी मैं आपके सामने हाज़िर हुआ, क्योंकि मुझे यह हुक्म मिला, प्रधानमंत्री की हैसियत से तो नहीं, क्योंकि प्रधान-मंत्रियों में जो कुछ खूबियाँ हों, यह सुनने में नहीं आया है कि वह कवि भी हुआ करते हैं। यह सही है कि साहित्य से और कविता से मुझे प्रेम है, लेकिन बहुतों को होता है। तो मैं बुलाया गया शायद इसलिए कि मैं साहित्य अकादेमी का सदस्य हूँ और कुछ इस अकादेमी ने सब भाषाओं में देश के साहित्य को, कविता को, बढ़ाने की कोशिश की है।

मैं समझता हूँ कि हमारा देश, या कोई भी देश, कितनी ही तरक्की करे, अगर उसका साहित्य और कविता तरक्की नहीं करती तब वह कुछ बेजान रहेगा। साहित्य एक चीज़, चाहे थोड़ी हो, लेकिन वह एक चीज़ है जिसके बिना किसी देश या किसी जाति में जान नहीं आती, और मैं इसको आवश्यक समझता हूँ कि एक देश की उन्नति में उसका साहित्य भी आगे बढ़े। बल्कि एक और तरह से मैं आप से कहूँ कि अगर किसी देश के बारे में मुझे कुछ नहीं मालूम हो कि वहाँ कैसा काम होता है, कितनी तरक्की हुई है, क्या क्या कारखाने बने हैं, क्या क्या योजनाएँ चल रही हैं, क्या क्या फाइव-इयर प्लान्स हैं, और ख़ाली उसके साहित्य को मैं कुछ जानूँ, तो उस साहित्य से झलक पड़ जाएगी कि उस देश में जान है कि नहीं है, वह देश आगे बढ़ रहा है कि सुकड़ रहा है, या जमा हुआ है। इसलिए साहित्य, ज़ाहिर है, एक बहुत ही आवश्यक चीज़ है। अब साहित्य या कविता कोई ऐसी चीज़ तो नहीं है कि आप एक मशीन चलाइए उसमें से निकलती आए, या रेडियो वाले हुक्म

दें तो कविताएं निकलती आएं किसी कारखाने से । वह या तो दिल से निकलती है, दिल और दिमाग से; नहीं तो कोई नकली चीज़ उसकी जगह आ जाती है । तो हमें कोशिश करनी है कम से कम कि ऐसी हवा, ऐसी फ़िज़ा हो, वायुमंडल हो, जिसमें यह चीज़ बढ़ सके ।

लेकिन भारत में, सब जानते हैं, कि बहुत सारी प्रसिद्ध भाषाएं हैं । उनका एक-दूसरे से सम्बन्ध काफ़ी है, और कभी-कभी ऐसा काफ़ी सम्बन्ध है कि एक दूसरे से लड़ा करती हैं और यह समझती हैं कि हम एक दूसरे को दबा के आगे बढ़ेंगे या हम ज़बर्दस्ती किसी की छाती पे बैठ जाएंगे । तो भाषा तो इस तरह से बढ़ती नहीं है, न साहित्य बढ़ता है । जैसे कि फूल निकलते हैं और बढ़ते हैं उस तरह से यह चीज़ें बढ़ती हैं । मुझे इस बात का पक्का विश्वास है कि भारत की भाषाएं एक-दूसरे से मिलकर और एक दूसरे के सहयोग से बढ़ेंगी । इसके माने यह नहीं हैं कि कोई एक दूसरे को दबाए । लेकिन इसके माने यह ज़रूर हैं कि एक-दूसरे से सीखें, भाषाओं में एक-दूसरे के विचार आएं, एक-दूसरे के शब्द आएं, और एक-दूसरे के ढंग आएं । इस तरह से भारत के साहित्य का मैदान बहुत बड़ा हो ।

मैं तो, खैर, उसको और भी बढ़ाने को तैयार हूँ कि साहित्य एक चीज़, आखिर में, एक देश की नहीं बन सकती है, वह सारी दुनिया की चीज़ है । जितने ऊँचे साहित्य हैं, या दुनिया के साहित्य में जो ऊँची चीज़ें लिखी गई हैं, वह दुनिया भर की हैं । किसी एक भाषा की और किसी एक देश की नहीं हैं । इसलिए अगर कोई साहित्य बढ़ाना चाहे तो उसकी खिड़किया और दरवाज़े सारी दुनिया की हवाओं के लिए खुलने चाहिए । हां, अपना ढंग उसका होगा ही, और ढंग रखना है; नक़ल करने से तो कुछ नहीं होता ।

तो यह विशेषकर आवश्यक है कि हमारे देश की जो भाषाएं हैं वह एक दूसरे से बहुत करीब का सम्बन्ध रखें । एक दूसरे की भाषा को हम पढ़ें, सीखें-समझें, और यह विचार जम जाय कि देश में अगर एक भाषा बढ़ती है तो उसके बढ़ने का असर और भाषाओं पर भी अच्छा पड़ता है; वह भी बढ़ती हैं । यह नहीं कि किसी और को धकेल के वह बढ़ती हैं ।

तो यह, जो आज एक सम्मेलन है और जिसमें आप भारत की बहुत सारी भाषाओं में कविताएं सुनेंगे—और उनका अनुवाद भी होगा हिन्दी में, उसके बाद—यह एक अच्छी चीज़ है, क्योंकि यह उनका मिलना आपको दिखाती है, जो ज़रूरी है ।

इस तरह से हम साहित्य अकादेमी में भी बहुत कोशिश कर रहे हैं कि सब भाषाओं की सहायता करें, ख़ाली हिन्दी की नहीं । अगर कोई साहब कुछ

और समझते हैं तो ग़लत समझते हैं । साहित्य अकादेमी देश की सब भाषाओं की उन्नति चाहती है, और उनकी सहायता करना चाहती है और उनको क़रीब लाना चाहती है । हम उसमें, थोड़े दिनों में, किताबें निकाल रहे हैं, एक भाषा के दूसरे में अनुवाद । जिसमें सारे देश की भाषाओं का साहित्य आप पढ़ सकें । चाहे एक ही भाषा को आप जानें, तो और को भी आप जान लें, उनकी कविता, और उनका साहित्य । दुनिया के और देशों के साहित्य का भी हम इस तरह से अनुवाद अपने देश की सब भाषाओं में करना चाहते हैं । बाहर के देशों की भाषाओं की किताबों की एक लम्बी फ़ेहरिस्त भी हमने बनाई है जिनका अनुवाद यहां की सब भाषाओं में हो । इस तरह से मैं समझता हूँ हम अपनी भाषाओं की सहायता करेंगे और उनका मैदान ज़्यादा फैलेगा, बसीअ होगा ।

खैर, यह सब तो सहायता करने के तरीक़े हैं । आख़िर में भाषा बढ़ती है अच्छे साहित्यकारों से, अच्छे कवियों से । कोई ऊपर के धकेलने से तो बढ़ती नहीं है । लेकिन मुझे विश्वास है कि हमारे देश में ऐसे लोग हैं और ऐसे लोग पैदा होते जाएंगे ।

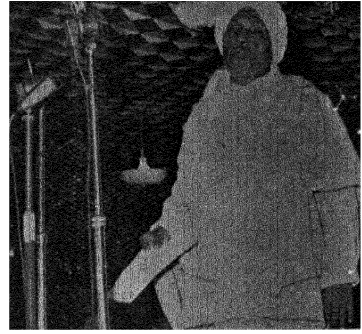
तो अब आप कविता सुनिए जिसके लिए आप यहां जमा हुए हैं, या दूर दूर से सुन रहे होंगे, और यह उचित है कि आज के कवि सम्मेलन में, आज की कविताओं में, सब में पहले संस्कृत की हो ।



संस्कृत

कवि : श्री महादेव पाण्डेय

रूपान्तरकार : श्रीमती इन्दुजा अवस्थी



संस्कृत साहित्य के प्रकांड विद्वान् और काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के संस्कृत महाविद्यालय के प्रधान तथा साहित्य विभाग के अध्यक्ष हैं। 'भारतशतकम्' की रचना की है।



भारत-वंदना

यस्मादेते प्रसूता विविधतनुभूतो येन जीवन्ति भूताः
यस्मिन् गच्छन्ति चैक्यं समधिकगुरुता यत्र मातुः पितुश्च ।
विश्वं सर्वं विभर्ति प्रकृतिरयमथो पूरुषश्च स्वतन्त्रो
देशं तं वा परेशं सुरवरभरिणीसुन्दरं कीर्तयामः ॥१॥
आलोलोलोलमालाकलकलकलिताम्भोधिकूलाललामाद्
यावन्नीहारभूमीधरधवलशिलालग्नभूसंविभागान् ।
सीमान्तादा च बंगोपसरिदधिपति यावदस्त्येष सस्यैः
पत्रश्यामैर्द्रुमाग्रैर्वलयितवसुधो भारतं नाम देशः ॥२॥
बंगैः संगीतकीर्तिः कलितकलकलश्चोत्कलैरान्ध्रबन्धु-
र्मद्रैरुन्निद्रमुद्रो जवजनितजयोद्गुर्जरः सिन्धुविन्दुः ।
पंचापैरंचितश्रीर्मधुमधुरधुरौ मध्ययुक्तेर्बिहारै-
रार्यावर्ताभिधानो जयति जनपदो मानिनां जन्मभूमिः ॥३॥

आद्योन्मेषाद् विधातुः प्रथमविकसितादाद्यपद्माग्रपत्रा-
 दारब्धा पुण्यपुंजैः कलुषलवलवनाप्यसंभिन्नगात्रैः ।
 देवंरप्यात्मलाभं श्रयितुमतितरां वाछिता विश्वमूर्ते-
 निर्माणोत्कर्षसीमा परमसुषमया कापि नीराज्यते भूः ॥४॥

गोर्वाणैः पुण्यपुंजो मधुमथनकलाकेलिनारिप्रसद्म-
 क्रीडारंगः प्रकृत्या मणिगणनिकरैः शेषधिवेदवाग्भिः ।
 पूर्वाभावा विशिष्टाध्ययनगुरुकुलं शिक्षयारम्भभूमिः
 संस्कृत्या सुप्रसूतिः सहजसुकृतिनामेष देशो गृहीतः ॥५॥



हम स्वर्गंगा के समान मनोरम उस भारत देश का कीर्ति-गान करते हैं,
 जिसमें विविध वृक्ष-वनस्पतियाँ हैं, जो प्राणियों के जीवन का आधार है ; और
 जिसमें सभी प्राणी बन्धु-भाव से रहते हैं ; माता-पिता का जहाँ समादर है ;
 प्रकृति विश्व का संभरण करती है ; और 'पुरुष' स्वतंत्र है ।

भारत देश के कूल कलकल लहरियों से ललाम हैं ; हिमाच्छादित पर्वत-
 श्रेणियों से इसकी भूमि सुशोभित है ; शस्य और वृक्ष-पत्रों की हरीतिमा से
 यह वसुधा को अलंकृत करता है ; इसके सीमान्त पर बंग देश के उपान्त का
 सागर उल्लसित है ।

मनस्वी-जनों की जन्मभूमि आर्यावर्त्त की जय हो; जहाँ बंग-देश का
 कीर्तिवान संगीत है; जहाँ उत्कल का कलित कलकल है; जहाँ आन्ध्र-निवासियों
 की जाग्रत मुद्रायें हैं ; जहाँ सागर-विजयी गुजरात देश है ; जो पंजाब देश से
 श्रीवेश है; मध्यदेश और बिहार से जिसका केन्द्र प्रदेश मधुयुक्त है ।

यह आदि देश विधाता के प्रथम पद्म-पत्र सा विकसित हुआ है ; यह भूमि
 पुण्य-पुंज, निष्कलुष देव-गणों के अवतरण की वांछनीया है ; यह ब्रह्मा की
 सर्वोत्तम रचना है ; अपनी परम सुषमा से समस्त पृथ्वी का शृंगार है ।

यह देश सुकृतियों का आगार है । देवताओं ने अमृत-मंथन का पुण्य-
 कार्य यहीं सम्पन्न किया । मणियों से यहाँ की प्रकृति समृद्ध है । यह वेदाध्यायी
 जनों की भूमि है । शिक्षा के आदि-स्थान गुरुकुल यहीं हैं । यह संस्कृति-गर्भा
 भूमि है ।

असमिया

कवयित्री : श्रीमती नलिनी बाला देवी

रूपान्तरकार : श्री हंसकुमार तिवारी



असम की प्रसिद्ध कवयित्री । १८९७ में गौहाटी के प्रसिद्ध बादोलोई घराने में जन्म । आधुनिक दंग की शिक्षा नहीं मिली; जो कुछ सीखा जीवन से और अपने वंश की उदार और स्वदेश-भक्तिपूर्ण परम्परा से । 'पिता' शीर्षक उनकी प्रथम कविता १२ वर्ष की अवस्था में एक पत्रिका में छपी । छोटी अवस्था में वैधव्य ने उनको अध्यात्म की ओर आकर्षित किया । उनकी रचनाओं में रहस्यवाद है, प्रकृति और आध्यात्मिक प्रेम के गीत हैं । 'संधियार सुर', 'सपोनार सुर', और 'पारस मनि' उनके कविता-संग्रह हैं । अपने पिता स्वर्गीय नवीनचन्द्र बादोलोई का जीवनचरित्र भी इन्होंने 'स्मृतितीर्थ', शीर्षक से लिखा है । रवीन्द्रनाथ ठाकुर की कविता से बहुत प्रभावित हुई हैं । १९५४ में असम साहित्य सभा की अध्यक्ष चुनी गई ।



आह्वान

पूवाले मुक्तिर उषा जिलिकिछे पूबे पूबारुण ।
प्रजातंत्र भारतर जनगण ऊलाह मगण,
नब प्रभातर नूतन दिनर नूतन बछरे आनि,
सोंवराइ दिले मुक्त भारतत नब करमर बाणी,

भारत सदाय आछिल स्वाधीन आजिओ स्वाधीन आमि ।
 पयत्रिंश कोटि भारतवासीये विश्व थाकिब जिनि ।
 युग अवतार श्रीरामचन्द्र कृष्ण बुद्ध शंकरर
 जनमदायिनी भारतवर्ष ज्ञानदात्री मानवर ।
 भारतर संजीवनी प्रति धूलिकणार माजत,
 आछे लेखा महत्वर पुण्य लिपि-बुरंजी पातत
 अनन्त बिज्ञान ज्ञान महानता महिमा बिकाश
 अमर आत्मार रश्मि प्रज्ञालोके विश्व परकाश ।
 साम्राज्यर संघातत शान्तिहीन राङली पृथिवी ।
 हिंसाद्वेष लोकक्षय पापे म्लान युगर सुरभि ।
 स्तम्भित जीवन धारा थमकिल जीवनर गति,
 साम्राज्य पीडित आत्मा जनगणे मागिले मुकुति ।
 कँपिल उत्तराखण्ड 'तथागते' दिले शान्तिवाणी,
 जावप्रेम अहिंसार महाधर्म 'पंचशील' दानि ।
 साम्राज्य उत्सर्गी दिले मानवर कल्याण व्रतत,
 सत्यप्रेम अहिंसार त्यागमय जीवन पथत
 शिकाले महान मन्त्र भारतत नव जीवनर,
 बिलाले भ्रातृत्व प्रीति विश्व मैत्री मरु मरतर ।
 सेइ मन्त्रे भारत जागिल, महात्मार महिमा प्रकाशि
 विश्व चमकिल देखि भारतर अपूर्ब संन्यासी,
 महात्मार ध्यान स्वर्ग प्रजातन्त्र भारतवर्षर
 मानुहे रचिब युग भारतर नव विधानर ।
 मुक्त भारतर प्रजा मुक्त बायु आकाश मण्डल,
 प्रजातन्त्र उचवर बरषिछे आशिष मंगल ।
 हियाइ हियाइ फुल प्रेरणार सुखर कमल ।
 बाधाहीन जनस्रोत अभियान उल्लास मुखर,
 स्वाधीन जीवन गति शक्तिमान भारत सन्तान ।
 नव जीवनत जागे कर्ममय बिसाल आह्वान ।
 विश्व मैत्री चेतनारे उद्बुद्ध भारत अनुरागी ।

दुचकुत लागे रं सृजनर सपोनर रागि ।
 प्रतिभार इन्द्रधनु बिचित्र बरणे रूपायित
 प्राणे प्राणे मुखरित जीवनर मधुर संगीत ।
 मृत्यु विभीषिकामय रणोम्मत्त उतला धरात ।
 भारतर शान्ति वाणी बरषिछे पुष्प पारिजात ।
 भारतर पुण्यभूमि स्वर्गसम पवित्र धूलात
 अ्रैक्यमय महामन्त्रे रामराज्य पातिम धरात ।
 विजयिनी भारतर आमि युग बिजयी सन्तान,
 नतुन जीवन गीति पृथिवीक आमिये शुनाम ।



आह्वान

उदित मुक्ति की उषा, दमकता पूरब नभ है,
 हैं आनन्दमग्न गण-भारत के जनगण सब ।
 किरणें नये प्रात की ले आर्यों कल्याणी,
 मुक्त देश के लिये कर्म की नूतन वाणी ।

हम स्वाधीन रहे, स्वाधीन रहेंगे भी हम,
 जगज्जयी पेंतीस करोड़ पुत्र चिर सक्षम ।
 रामकृष्ण की जन्मभूमि है भारत जननी,
 बुद्ध और शंकर की भी यह जन्मदायिनी ।

है संजीवन सना धूल का कतरा-कतरा,
 पावन लिपि में है इतिहास यहाँ का निखरा ।
 महिमा और जोत का अक्षय यहाँ कोष था,
 अमर आत्मा के प्रकाश से दीप्त लोक था ।

साम्राज्यों की रक्त-तृषा से रंजित धरती,
 हत्याद्वेष पाप से युग की मुरभि म्लान थी ।
 जीवन की धारा हत, जीवन की गति आहत,
 लगीं माँगने मुक्ति आत्मायें पीड़ित नत ।

कपिलवस्तु से एक आत्मा अभिनव जागी,
 सुख ऐश्वर्य असीम विभव से बना विरागी ।
 पंचशील के महाधर्म की गूंजी बाणी,
 सत्य, अहिंसा, विश्व-बन्धुता की कल्याणी ।

उसी मंत्र से फिर गूंजा भारत का आँगन,
 त्याग-तपस्या से बापू के जागा जनगण ।
 चकित रह गया विश्व देख यह नया जागरण,
 संन्यासी का ध्यान-स्वर्ग साकार हुआ बन ।

कटीं दासता की जंजीरें, मुक्त देश है,
 मुक्त बापु, नभ का मंगलमय नया वेश है ।
 बरस रहा आशीश, महोत्सव पर यह मंगल,
 जन-जन के मानस-सर फूले सुख के शतदल ।

जीवन बाधाहीन उमंगें नयी चपल हैं,
 प्रगति पथ में बढ़े चरण ये सबल-प्रबल हैं ।
 नवजीवन में जगे कर्म का नव आवाहन,
 विश्व-बन्धुता की उद्बुद्ध चेतना अनुदिन ।

हो स्वप्निच उन्माद आँख में नव सज्जन का,
 इन्द्रधनुष प्रतिमा का हो जगमग सतरंगा ।
 प्राण-प्राण में जीवन का संगीत मुखर हो,
 माटी की धरती पर झिलमिल स्वर्ग सुघर हो ।

रक्त-स्नान से रणोन्मत्त लथपथ है धरती,
 पारिजात-सी शांति-मुधा भारत की भरती ।
 ऐश्वर्यमंत्र से रामराज्य हम यहां बनायें,
 और विश्व को जीवन का मधुगीत सुनायें ।



श्री हंसकुमार तिवारी

जन्म सन् १९१८; मानभूमि, बंगाल । पत्रकारिता के माध्यम से साहित्य में प्रवेश । 'विजली', 'किशोर' आदि पत्रों के संपादक तथा कई समाचार-पत्रों से संबद्ध रहे । अनेक प्रसिद्ध बंगला पुस्तकों का हिन्दी अनुवाद प्रस्तुत कर चुके हैं । 'रिमझिम', 'संचयन' और 'अनागत', काव्य-संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं । पता है, मानसरोवर, गया ।



उड़िया

कवि : डा० मायाधर मानसिंह

रूपान्तरकार : श्री प्रभाकर माचवे



पुरी ज़िले में पारिकुड में १३ नवम्बर १९०५ को जन्म ।
पटना विश्वविद्यालय से एम० ए० करके विदेश गए ।
इंग्लैंड में डरहैम यूनिवर्सिटी से 'कालिदास और शोक्स्पियर'
पर प्रबन्ध लिख कर पी-एच०डी० प्राप्त की । संप्रति संबल-
पुर के गंगाधर मेहेर कालेज के प्रिंसिपल । प्रकाशन : धूप,
हेमशस्य, जीवन-चिंता, बापू तर्पण, जेमा, कोणार्क, अख्यत
आदि काव्य; बाराबाटी, पुजारिणी, पुष्पिता, दुर्भिन्न (पद्य-
नाटिकाएँ); कमलायन (आख्यान-काव्य); शिक्षा, शिक्षक,
शिक्षायतन; साहित्य ओ समाज; कवि ओ कविता; बुद्ध
(गद्य-ग्रंथ); नष्ट नीड (नाटक); अन्वेपण (उपन्यास) तथा
उड़िया ज्ञानकोश के प्रथम भाग का संपादन । साहित्य
अकादेमी के उड़िया सलाहकारी बोर्ड के प्रमुख हैं ।



छबिश जानुआरी

जननी भारत,

तो माटिरे गणराज्य पुनरुत्थानर,

स्मारक दिवसे आजि करे नमस्कार ।

स्नेहमयी त्रिशकोटि सन्तान जननी,
कल्याण करुणामय तोर पक्षपुटे,

सहस्र वर्षर घोर दुर्दिन संकटे
शत शत आक्रमणु, साम्राज्यर उत्थान पतने
वंचाइकि रखिथिलु एइ तोर अरक्ष जातिरे,
गहन अन्तरे

गोपने साइति रखि एहि महास्वप्न
निजपुत्रकन्याकर गणराज्य, स्वराज्य संभोग
हेब दिने पुनर्बार, इतिहास प्रथम दिवसे
तुहि येबे ठिग्रा कलु आद्ये तोर शान्त गृहस्थालि
हिमाचल पाद तले,

श्रेणीहीन, भयहीन, नरपतिहीन
जीवन संभोगकारी साम्यतन्त्रराज्य
गढ़ि उठिथिला येन्हे एइ तोर आपणा माटिरे ?
आजिर ए नब गणतंत्रे
जननी स्वरूप तोर बहुयुग परे
स्पष्ट प्रकटित येन्हे स्वाधीन ए देशे,
सात्विक गौरवमय दीर्घ तोर अन्तरर गाथा
आजि मोर प्राणे प्राणे बहे येन्हे काल प्रतिलोमे ।

समयर शत घन प्रस्तर प्राचीर
भेदि एइ स्पष्ट येन्हे शुणिबाक् पाए
कधोपकथन,
महेन्द्र दरीर घाटे सिन्धुनद जले
आसुर वणिक साथे, द्राविड योगीर ।

पुणि कर्णे बाजे
शतद्रु पुलिने आर्य ऋषि बिम्बोष्ठर
प्रभाते उत्थित सामगान सुगम्भीर

तपोमग्न थिल रहि सेहि द्रुइ वरपुत्र लागि
 मातृ प्रिय, भ्रातृ प्रिय, गुणहृद सम्राट याहांक
 त्यागपूत, शुभंकर स्वार्थहीन पुन्य परशर
 घटि अछि एइ एक जन्मे,
 जन्मान्तर मोह परि कोटि जीवनर
 आणि ले आभूकु येहु अन्धकार उन्मुक्त आलोके
 मिथ्यार सत्यरे पुणि मृत्युरु जीवने ?
 पुन्यस्पर्श बापूजीर जड़ कोटि कोटि
 हेले क्षुब्ध प्राणवन्त, नव सचेतन
 मानविक अधिकारे ।

बापू जीर पछे,
 निर्माता नेहेरू
 धीरे करे से विराट जाग्रत गणरे
 समृद्ध श्रीमन्त, निज पुरातन भूम,
 विश्वजाति मेले पुणि वरेण्य शरेण्य
 सम्मानित शत्रु बोलि पर शासनर
 ए धरार सकल प्रान्तरे,
 बंधु श्रेष्ठ, पर पीड़ितर ।

तोर स्वप्न अनुयायी, तोर प्रिय सतान गठित
 येणु एहि भारतर नवगणतंत्र ।
 ताहार स्वाधीन प्रजा, आजिर ए स्मारक दिवसे
 प्रेरिवाकु चाहें तार समजने ए धरार सकल देश रे
 सेहिनोर वाणी सनातनी
 सौहादर्यर सहावस्थानर ।
 आस चीन, आस बर्मा, आस हे निप्पन,
 आस युरो-आमेरिका, आस सोभियेट
 बुद्ध-गान्धी-पूत एहि अबैर माटिरे
 अन्योन्य-वैरता तेजि, महामानवर
 ए महामिलन भूमे मिलबन्धु सम ।

जननी भारतवर्ष खोलिछि ता द्वार
शत्रु, मित्र, यिए येवे असि अछि एथि
मानवर इतिहासे शुणाइ प्रथमे
मानवर चारिपाशे देव अधिष्ठान ।

आसे पुणि शान्त क्षुद्र अरण्य कुटीरु
विराट रसाल महा कवितार ध्वनि
षौरुष ओ नारीत्वर महा अभिनय
निखिलजातिर मर्म गभीर काहाणी
रामसीता कृष्णार्जुन द्रौपदीर कथा ।

पुणि शुण, शुण विश्व जने
राजपुत्र फिगिदेइ सकल विलास
मानवर मुक्तिपाइ वरि कृच्छ्र पथ ।

धर्मचक्र-प्रवर्तन मृगदावब्रने
एइ करे, व्याख्या करि जनतार भाषे
महाधर्म, सत्य, न्याय, प्रजा, करुणार
या कल्याण उमि

प्रसारित करिअछि आलोक, संस्कृति
धरणीर देशे देशे, कोटि कोटि जने
देखाइ सरल पन्था महाजीवनर ।

जननी, अतीतपरि तो शत बोइत
पुणि यिब घाटे घाटे सात समुद्रर
पहंचाइ देशे देशे सेहि तोर बार्ता सनातनी,
जीवन आनन्दमय, जीवन पवित्र
जन्तुर स्वभाव हिंसा, नुहे मनुष्यर
हत्यारु आश्रय बढ, बैररु मित्रता
वर्ण-निर्बिशेषे

ईश्वर आसीन प्रति नर हृदयरे
सत्य एक,

भिन्न उच्चरित याहा प्रचारक मुखे ।

सहस्र वर्षर सेहि घोर दुर्दिनरे
 तमेकिमा आपणार निगूढ़ अन्तरे
 मुक्त हस्ते देइ अछि अकुण्ठ आतिथ्य
 पररे करिछि निज विदेशीरे देशी ।
 तेणु मुं गर्वित याहा धमनीरे मोर
 बहे सर्व रक्त धारा ।
 श्वेत, कृष्ण, हरिद्रादि सकल चमंर
 द्राविड, अष्ट्रिक, आर्य, मंगोल, टिव्वेटे ।
 सकलर उपादाने मो देह गठित
 विश्वमानवर
 गर्वित प्रतीक मुंहि, मुक्त भारतर
 साधारण नागरीक
 बद्ध परिकर पुणि थापिवाकु लोकमत परे
 ग्रामराज्य, गणराज्य, श्रेणीगोष्ठीहीन,
 उच्चनीच-लज्जाहीन, शोषण विमुक्त ।
 परस्पर हिंसा ईर्ष्या अविश्वास तेजि
 शुण विश्व बन्धुगण, वाणी भारतर-—
 बंधुतार, अहिंसार विश्वकल्याणर ।



छब्बीस जनवरी

भारत जननी ! तेरी मिट्टी में गणराज्य पुनर्बार
 स्मारक दिन पर करता हूँ मैं नमस्कार !
 स्नेहमयी ! तुम तीस कोटि सन्तानों की हो जननी
 कल्याण-करुणामयी ! तेरे पक्षपुट में
 सहस्रों वर्षों के दुर्दिन घोर संकट में
 शतशत आक्रमणों में, साम्राज्य उत्थान-पतन में
 गहन अन्तर में छिपा रखा था क्या यह महास्वप्न
 निज पुत्रपुत्रियों का गणराज्य होगा स्वराज्य पुनः

जैसा इतिहास के शुरू में हिमालय के तले
श्रेणीहीन भयहीन भूपहीन साम्यतन्त्र-राज्य
तेरी ही मिट्टी में कभी गढ़ उठा था ।

आज गणतंत्र में पुनः वही गाथा
स्पष्ट प्रकटित है सात्विक स्वाभिमान भरे अन्तर की
समय के शतघन प्रस्तर प्राचीर चीर
सुन पाता स्पष्ट वही संलाप :
महेन्द्र दरीघाट पर सिन्धुनदी के किनारे
आसुर वणिक के संग द्राविड उस योगी का
पुनः सुना आर्यऋषि-श्लोठ से उठा हुआ
शतद्रु-पुलिन पर सामगान सुगंभीर ।

मानव-इतिहास में पहले-पहले सुना
मानव के आसपास देवता का अधिष्ठान
पुनः शान्त छोटी-सी वन की कुटिया से उठी
विराट रसाल महाकाव्य-ध्वनि
पौरुष और नारीत्व के वे महानाट्य
निखिल जाति मर्म भरी कहानियाँ :
राम-सीता-कृष्णार्जुन-द्रौपदी की कथा !

सुनो सुनो विद्वज्जन, पुनः सुनो
राजपुत्र सब विलास तजकर
मानव की मुक्ति के लिए विरक्त बनता
धर्मचक्र-प्रवर्तन मृगदाव वन में
करता है व्याख्या, करता है जनभाषा में !
महाधर्म सत्य, न्याय, प्रज्ञा, करुणा की कल्याणोर्मि
प्रसारित करता है देश देश आलोक-संस्कृति
सरलपथ महाजीवन का बिखा पथ !

जननी ! अतीत की ही भाँति तेरे शत जहाज
पुनः घाट-घाट सात समुद्रों के पार आज
देते हैं संदेश—“जीवन आनन्दमय, जीवन पवित्र है !
हिंसा तो पशु स्वभाव, नहीं है मनुष्य का,

हत्या नहीं, रक्षा बढ़ो, बर नहीं, मित्रता;
वर्ण-निर्विशेष प्रति-जन में है ईश्वर ।
सत्य एक, प्रचारक मुख से भिन्न उच्चारित ।'

मां ! ये ही तेरे दो वर पुत्र पुनः आयें,
इसी प्रार्थना में ये हजारों वर्ष तम के क्या बिताये तूने !
ये जो तुझे 'मृत्योर्मांसात्मगमय, तमसो मा ज्योतिर्गमय' ले जायें !
बापू जी के पुण्य-रश्मि से कोटि जड़ बने चेतन
प्राणवन्त मानव-अधिकारमय !
बापू जी के बाद, निर्माता नेहरू धीरे से जागृत करता है यह विराटगण
समृद्ध, श्रीमंत पुरातन भूमि में,
विश्वशांति से वरेण्य बना !
सब प्रकार के परपीड़न बुरे, बंधु सारे जन ।

तेरे स्वप्न-अनुयायी ! तेरी प्रिय जनता यह गठित कर,
बना नया भारत का गणतंत्र
तेरी स्वाधीन प्रजा, आज इस स्मरण-दिन
चाहती है फैलाना सौहार्द्र, सहास्तित्व,
आओ चीन, आओ बर्मा, आओ हे निष्पीन
आओ यूरो अमेरिका, आओ सोवियत जन
बुद्ध-गांधी-पूत इस निर्वैर मिट्टी में
अन्योन्यवैर छोड़, महामानवों के इस महामिलन तीर्थ में
आओ मिलो बंधु बन ।

भारत-जननी ने किये सबके लिए द्वार खुले
शत्रु मित्र बाहर हों, यहां सब एकसार
मुक्तहस्त देती है अकुंठातिथ्य वह
पराये को अपना बनाती, विदेशी को देशी ।

इसीलिए गवित हूँ, मेरी धमनी में सर्वरक्तधारा बहती है,
श्वेत, श्याम, हरिद्रादि सारे चर्म में है :
द्राविड़ हो, आस्ट्रिक हो, आर्य-मंगोल-भोट
सबके उपादान से है देह गठित विश्व-मानव की,
गरबीला मैं प्रतीक स्वाधीन भारत का साधारण नागरिक !

करता हूँ प्रण इस दुनियां में ग्रामराज
 बनाऊंगा श्रेणी-गोष्ठीहीन, उच्चनीच-भेदहीन, शोषण-विमुक्त
 हिंसा-ईर्ष्या-अविश्वास-त्यक्त, सुनो विश्व बंधुगण, भारत की वाणी
 बंधुता, अहिंसा, विश्वशांति की कल्याणी !

श्री प्रभाकर माचवे

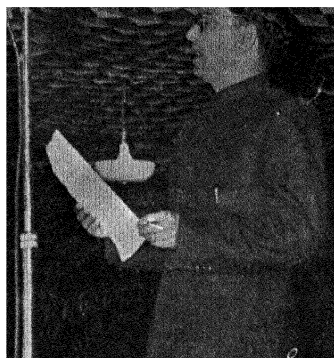
जन्म १९१७ में ग्वालियर में। शिक्षा : आगरा से दर्शन और अँगरेज़ी में एम० ए०। माधव कालिज उज्जैन में ११ वर्ष तक प्राध्यापक रहे। उसके बाद ६ वर्षों तक आकाश-वाणी में काम किया। आजकल साहित्य अकादेमी के सहायक-मंत्री हैं। लिखना सन् १९३४ में शुरू किया। हिन्दी और मराठी में समान-रूप से लिखते रहे। अबतक परंतु, एक तारा, द्वाभा, साँचा (उपन्यास), खरगोश के सींग (निबंध-संग्रह), समीक्षा की समीक्षा और व्यक्ति और वाङ्-मय (आलोचनात्मक निबंध) आदि पुस्तकों की रचना कर चुके हैं।



उद्

कवि : श्री रविश सिद्दीकी

रूपान्तरकार : श्री अँकारनाथ श्रीवास्तव



नाम शाहिद अज़ीज़ अहमद 'रविश' । सिद्दीकी वंश के हैं । जन्म १० जुलाई १९११, जन्मस्थान ज्वालापुर । पिता मौलवी तुफ़ैल अहमद शाहिद भी कवि हैं और उन्हीं से 'रविश' साहब ने काव्य-दीक्षा प्राप्त की । क़ुरान मजीद और फ़ारसी की शिक्षा घर पर प्राप्त की, बाद में अंग्रेज़ी और हिन्दी स्वयं सीखी । ७ वर्ष की अवस्था से ही कविता करना आरंभ किया । ग़ज़ल और नज़्म—दोनों ही क्षेत्रों में आपका ऊँचा स्थान है । उनकी रचनाओं में अब तक 'कारवां' और 'मेहराब ग़ज़ल'—यह दो पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं ।



योमे जमहूर

वक़्त की मसीहाई, ले रही है अँगड़ाई
जह्ने चश्मे ख़ूबां में ।
ज़िदगी पलट आई, साजे आरजू लेकर
बज़मे नाजे जानां में ।

रंगोबू के ख्वाबों का, कारवाने बेपरवा
 हर मुक़ाम से गुज़रा ।
 खेमाजन हुआ आखिर बूए आशना पाकर
 हिंद के गुलिस्तां में ।
 ज़िंदाबाद परवानो, खूने दिल से रौशन को
 तुमने शमये आज़ादी ।
 आफ़रीं है दीवानो, लाये तुम बहारों को
 दस्त से गुलिस्तां में ।
 तोड़कर दरे ज़िंदां, अमन के फ़िरिश्तों को
 बालो पर दिए हमने ।
 रौशनी मिली हमसे, दोस्ती के साहिल को
 दुश्मनी के तूफ़ां में ।
 सोजे दिल की बंदारो, एक दलील रौशन है
 मुब्ह कामरानी की ।
 तीरगी का शिकवा क्या, रात भर की मेहमां है
 सायर चिराशां में ।
 ज़िंदगी ने समझा है, राजे जन्नते आदम
 दर्दे आशना बनकर ।
 खुल्द जाविदानी की, राहतें सिमट आईं
 आज दर्दे इंसां में ।
 जिक्रे लालमो गुल क्या, खाक मेरे गुलशन की
 हासिले बहारां है ।
 सब अज़ीज हैं मुझको, फूल हो कि काँटे हों
 दामने गुलिस्तां में ।
 नौ-ब-नौ यह रंगीनी, चेहरए गुलफ़शां की
 जज़्बे शौक है शायद ।
 हम नशीं बता कब थी, ख़म-ब-ख़म यह बेताबी
 गेसुए परीशां में ।

रस्मो राहे महफिल से, आपको कहां निस्वत
 कुछ तो ऐ रविश कहिए ।
 किस की जुस्तजू आखिर, आज खींच लाई है
 महफिले निगरां में ।



गरातंत्र-दिवस

आज सुन्दर नयनों के हलाहल में युग का अमृत-तत्व स्पंदित हो उठा है, जीवन नव-आशाओं की वीणा लेकर सौंदर्य की रूप-सभा में पलट आया है ।

रंग और सुगंध के स्वप्नों का निर्वृन्द कारवां हर मंजिल को सगर्व ठुकराता हुआ बढ़ा जा रहा था । यकायक मानो अपने सुहृद की सुपरिचित सुवास ने उसे रोक लिया—ठहरो, भारत-उपवन ही तुम्हारा विश्रामस्थल है ।

शहीदों, तुम अमर हो, तुमने पतिगों की भाँति अपनी बलि देकर स्वतंत्रता की ज्योति जगाई है, तुम धन्य हो, तुम वसंत को वनों से खींचकर उपवन में ले आए हो ।

कारागृहों को तोड़कर हमने शांति के देवदूतों को पंख प्रदान कर दिए हैं, हमारे प्रयत्नों से शत्रुता के तूफानों के अन्धकार में मित्रता के शांत कूल जगमगा उठे हैं ।

हृदय का यह जाग्रत उत्साह हमारी सफलता के आगामी प्रभात का ज्वलंत प्रमाण है ; उज्ज्वल दीपों की छाया में रंगते हुए अन्धकार की बात छोड़ो । नव प्रभात के आते ही वह स्वयं ही विलीन हो जायगा ।

आज जीवन ने इस असीम रहस्य को जान लिया है कि मानवता की वेदना में ही धरती का स्वर्ग छिपा हुआ है । देवलोक का समस्त सुख-विलास आज मनुष्य के हृदय का दर्द बन गया है ।

लाला और गुलाब की तो बात ही क्या, आज मेरे उपवन की धूल भी वसंत के मस्तक का चन्दन बन गई है, मुझे अपने उपवन का सभी कुछ प्रिय है—फूल भी और काँटे भी ।

नव विकसित फूलों की तरह प्रतिपल मुस्कुराता हुआ यह सौंदर्य शायद मेरे ही आकर्षण का रूप है । मित्र ! क्या इससे पहले भी बिखरे हुए बालों के अधीर सौंदर्य का ऐसा स्वप्न किसी ने देखा था ?

शिष्टाचार-प्रदर्शन पर गर्व करती हुई इन सभाओं से तुम्हारा क्या सम्बन्ध ? ऐ 'रविश' ! कुछ तो कहो आज तुम किसको ढूँढते हुए इस सौंदर्य-लोक में आ निकले हो ?

कन्नड

कवि : श्री द. रा. बेन्ने

रूपान्तरकार : श्री नरेन्द्र शर्मा



धारवाड में ३१ जनवरी १८९६ में जन्म। बंबई से एम० ए०। धारवाड के राष्ट्रीय विद्यालय के संस्थापक। 'स्वधर्म', 'जय कर्नाटक' और 'जीवन' के संपादक। 'गेलेयर गम्पु' (मित्र-गोष्ठी) के सदस्य। १९३२-३३ में जेल-यात्रा; '३२से '४० तक ब्रिटिश नौकरी से वंचित। १९४८ के बाद मराठी में भी लिखने लगे। १९३० (मैसूर) में तथा १९३५ (बंबई) में काव्य-विभाग के अध्यक्ष तथा शिमोगा के कर्नाटक साहित्य सम्मेलन के सभापति। १९५५ में 'होस संसार' नाटक पर प्रथम पुरस्कार। आठ कविता-संग्रह, दो एकांकी संग्रह, पांच समालोचना के ग्रन्थ, तथा प्रो० रानडे के 'उपनिषदों के रचनात्मक सर्वेक्षण' तथा अरविन्द के 'भारत में पुनर्जागरण' के अनुवाद के प्रणेता। पता : नीलनगर, शोलापुर। साहित्य अकादेमी के कन्नड सलाहकार बोर्ड के सदस्य हैं।



नूतन चेतना

पुरातनऊ चिरनूतन ।

भारत मातेय चेतन ॥पुरा०॥

असुररिदा भूभारवागे । सम
हारभाव संचारगोंडु । नव
धर्मवन्नू सुस्थिरवगो लिभे । अत्र
तार बागि श्रीरामकृष्ण रोलू ॥

इलेयोलगिलि दद्दु ।

मूर्तिया इदु निर्भर्तन ।

भारत मातेय चेतन ।

पुरातनवु नवनूतन ॥

हिमसेइंद कत्तिरिस प्राण । का
रुण्य वर्ष अनवरत दान । वेने
वर्धमानविदु महावीर । रोलुं
लोकाग्रते येरिद्दु मत्ते ॥ तावे

सत्यपथव हिडिदद्दु तानु । दी
नरिगेदुडीदु मडिदिद्दु कूड । तं
तन्नवरिदेदे गुंडिगेसिडि । दू
राम नाम जवि सुत्तालहिम ॥ सेयू
करुनेगे मडिदिद्दु ।

भारत भाग्य विधातन ।

भारत मातेय चेतन ।

भव्यवु दिव्यवु नूतन ॥

सहस्रविन्दाक्षरदल्लि । प्र
त्यक्ष विद्दु विज्ञान दीक्षे । पडे
दिद्दु ईक्षणकु मौन मुद्रे । यलि
संतत कृपेयलि समाधितवु ॥ ता
माडदे इदे सद्दु ।

हृदय पुरुष संजातन ।
 भारत मातेय चेतन ।
 पुरातन वे चिर नूतन ॥

शास्त्र शस्त्र सम्पन्न भुवन । वा
 शिवन मरेतु यमभवनदंते । भण
 गुद्दतिरलु सारुत बन्तु । सह
 जीवन मत्रव पठिसुत्तना ॥ दा
 रिद्र्यदि मुलु गिद्दु ।

जितन ओडनये चेतन ।
 ओलि सुवदे नव नूतन ।
 भारत मातये चेतन ॥

लोकवा गिद्दुदु ।
 निलिसितु शांतिय केचन ।
 भारत मातये चेतन ।
 चिरंतन वु चिर नूतन ॥

कनसु कंडु कंगेट्टु कुरुडि । नला
 हुरुडिनिद नाडेदिरलु जगवु । ता
 सुप्तिस्वरद प्रज्ञप्ति यागि । निज
 साक्षीयन्ते ताटस्तया दल्ले ॥ धन

बुद्ध रोलेद्दुदु ।
 शून्य दाचे सम्भूतन ।
 भारत मातेय चेतन ।
 पुराणवेन्दुरु नूतन ॥



नूतन चेतना

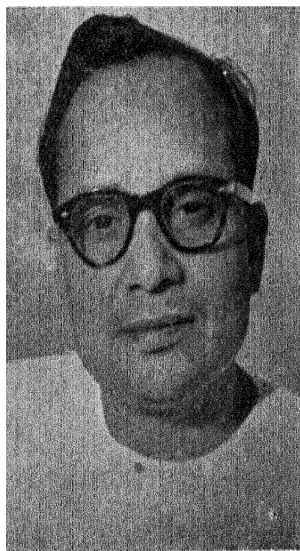
भारत का चेतन्य तत्त्व प्राचीन, किन्तु नित नूतन !
 हिंसा के उत्पातों से जब भूमि-भार बढ़ जाता,
 आते तब संहार-भाव से असुरारी भव-त्राता,
 भारत की निर्भीक चेतना राम-कृष्ण-संकर्षण ।

हिंसा के हाथों उत्पीड़न बढ़ा, प्राण घबराए;
 वर्धमान कुरुणाधन बन कर महावीर तब आए,
 मैत्री के ध्वज में फहराया फिर भारत का चेतन !
 स्वप्न सृष्टि को सत्य मान, अभिमान बढ़ा जाता था,
 अहंबुद्धि को देह गेह की निद्रा से नाता था,
 हुआ दीप्त तब महाबोधि से महाशून्य का आसन !
 रक्त-स्वेद-सिंचित-सत्याग्रह-पथ पर बढ़े निरन्तर,
 सह हिंसा की घात, अहिंसा-मंत्र विश्व को देकर,
 कर चेतन को प्रकट, गए कर आत्मोत्सर्ग महात्मन् ।
 शास्त्र-शास्त्र-संपन्न विश्व ने है शिव को बिसराया,
 शस्य-श्यामला वसुंधरा पर आज मृत्यु की छाया,
 पर विपन्न यह देश कर रहा विश्व-शान्ति-संवर्द्धन ।
 दश दिशि में शत शत दल खोले हैं अरविन्द सुशोभित,
 समाधिस्थ विज्ञान, नयन ध्यानस्थ, मौन में लय नित,
 कोलाहलमय विश्व करेगा कल जिसका आवाहन !



श्री नरेन्द्र शर्मा

जन्म सन् १९१३, जहाँगीरपुर, ज़िला बुलंदशहर, उत्तर प्रदेश । शिक्षा: प्रयाग विश्वविद्यालय से एम० ए० । सन् १९३७ में 'भारत' के सह-सम्पादक के रूप में कार्य किया । सन् १९३८ से ४० तक अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के कार्यालय से संबद्ध रहे । सत्याग्रह-युद्ध में सन् १९४०-४२ में कारावास गये । सन् १९४३ से १९५३ तक बंबई में फ़िल्मों में गीत तथा संवादलेखन किया । आजकल आकाशवाणी दिल्ली के प्रसार-संगीत का निर्देशन कर रहे हैं । काव्यसंग्रह प्रभातफेरी, प्रवासी के गीत, पलाशवन, कामिनी, मिट्टी और फूल, हंसमाला, रक्तचंदन, अग्निशस्य और कदलीवन । कहानी-संग्रह कड़वी मिट्टी बातें प्रकाशित हो चुके हैं ।



कश्मीरी

कवि : श्री रहमान राही

रूपान्तरकार : डा० हरिवंशराय वच्चन



श्रीनगर में ६ मई, १९२५ को जन्म । १९५१ में जम्मू-कश्मीर विश्वविद्यालय से फ़ारसी में एम० ए० किया । इस समय वहीं फ़ारसी तथा उर्दू के अध्यापक हैं । 'सनव्यिन साज़', 'सुभुक सौदा' तथा 'यिमसान आलव' कश्मीरी पुस्तकों के रचयिता । कश्मीर की कल्चरल कान्फ़्रेंस द्वारा प्रकाशित साहित्यिक पत्रिका 'कांगपोश' के संपादक । आपके अधिकांश गीत कश्मीर की जनता तथा लोकतंत्र के पक्ष में किए गए प्रयास के संबंध में हैं ।



Post Graduate Library
of Arts & Commerce, O. B.
महाराष्ट्र में छ: शोनिथ

च कव छक शाम लोट अख़ताव लूसिथ वोश हेवान त्रावुनि ।
मे वुनमै बारहा सुबहम छ थनु प्योन ज़िदगी प्रावनि ।
च छी वुनि चिथर डीशिथ मर्द भागृकि दाग बै गवान ।
म्य छूम सोंतुक खयालइ हावसन हुन्द वाग फोल रावान ।

म वनतम जिंदगी छा पेन्जि कुनि प्यठ जाह करार आमृत ।
 च प्रिछ आरन कोलन जाह मंजिलन मा छु शुमार आमृत ।
 च है पाने वुछुत मंजलिक गबर मा मंजिलिनइ रोजान ।
 छु मोसुम पाज फरिसई तल वुफान शेछ संगरन सोजान ।
 छी कात्याह कैद हेमतस काम ह्यथ अज ब्रेडि फुटरावान ।
 बेकस रातिक छि अज याशा करान शाहन पथर पावान ।
 यि असि यव चव वोनि मा है कि काह सु जुलमुक जहर असि चाविथ ।
 दो है मा युद हेकन सान्यन इरादन मूल अलराविथ ।
 खबर छम वुनि छि केहं बदखाह यछान लोलस थवुन पाबंद ।
 छु ट्योठ बासान केचन जाहिलन सान्यन कथन हुन्द कन्द ।
 खबर छम जिंदगी छुन चानि हुसनुक रंग वुनि आमून ।
 छि शोकस वुनि स्यठाह ठरि वारु छुन लजि बामुनाह द्रामून ।
 मगर व्यथ मा छे शोगित वख छु असि सीत्यन दवान दौरान ।
 संगर मालन छि वुठ गुमनान न गठ कारस छ सथ सोरान ।
 वो रयब दोहदिश गजल हुसनुकि वुनि छे लोलस नजर थावुनि ।
 च कव छव शामलाट अखता बलूसिथ वोश हेवान त्रावुनि ।



सोता है संसार नहीं

अंधकार को देख रक्त के आँसू व्यर्थ बहाता है,
 फिर कहता हूँ सब तम कटता जब कि सवेरा आता है,
 ओ बहार तूने तुषार का ओढ़ कफ़न क्यों रक्खा है ?
 मेरे दृग का स्वप्न बसन्ती दृश्य नए दिखलाता है;
 फिर करती श्रृंगार मही,
 सोता है संसार नहीं ।
 जीवन की गति रोके, सागर नापे, किसमें क्षमता है,
 मौलों के पत्थर थक जाते, किन्तु रास्ता रमता है,
 नई जवानी के कंधों पर डेने उगते नए नए,
 बाज़ नोड़ से उड़ता है तो चोटी पर ही थमता है;
 गति रखती मँझधार नहीं,
 सोता है संसार नहीं ।

ताकत वाले आज हाथ की हथकड़ियां तड़काते हैं,
 कल के निर्बल आज सबल शाहों के तलत हिलाते हैं;
 किसकी हिम्मत आज पिलाए जहर पिया जो कल हमने,
 हम दीवारें हैं जिनको सेलाब सेलाम बजाते हैं;
 छूती हमको धार नहीं,
 सोता है संसार नहीं।

जंजीरों में बाँध मुहम्बत को मत रखो नादानो,
 भाईचारे में जो मोठापन है उसको पहचानो,
 अभी ज़िन्दगी की पंखुरियां अगनित खलने वाली हैं,
 खिलने को हैं फूल अभी बहुतेरे, इसको सच मानो;
 बीती अभी बहार नहीं,
 सोता है संसार नहीं।

जग सोता है नहीं, हमारे साथ समय की धारा है,
 मुसकाती है सुबह, अंधेरे का होता निबटारा है,
 मैं सुन्दरता के कदमों में गीत बिछाता जाऊँगा,
 सुनो, प्यार से कितने मैंने तुमको आज पुकारा है;
 डरने की दरकार नहीं,
 सोता है संसार नहीं।



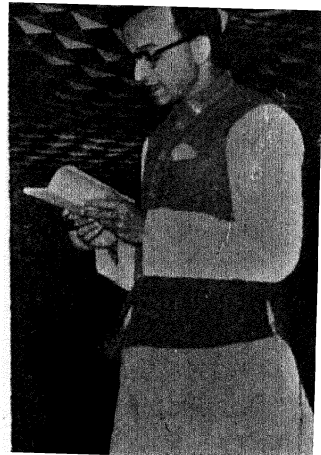
डा० हरिवंशराय वच्चन

जन्म १९०७ में, इलाहाबाद में हुआ। प्रारम्भिक
 संघर्षपूर्ण जीवन भेलकर विश्वविद्यालय की उच्च शिक्षा
 प्राप्त की; फिर लगभग दस वर्ष तक प्रयाग विश्वविद्यालय के
 अंग्रेज़ी विभाग में अध्यापन-कार्य किया। इसी बीच इंग्लैंड
 जाकर कैम्ब्रिज की पी.एच० डी० की उपाधि प्राप्त की।
 स्वल्प काल के लिए आकाशवाणी में हिन्दी निर्देशक रहे।
 आजकल विदेशकार्य-मंत्रालय में विशेष अधिकारी हैं।
 मधुशाला द्वारा सर्वप्रथम लोकप्रियता मिली। उसके बाद
 मधुवाला, मधुकलश, निशा-निमंत्रण, एकांत संगीत, आकुल
 अंतर, सतरंगिनी, मिलन-यामिनी, बंगाल का काल, खादी
 के फूल, सूत की माला आदि कविता-पुस्तकें प्रकाशित हुईं।
 नया संग्रह 'प्रणय-पत्रिका' अभी प्रकाशित हुआ है। पता :
 विदेशकार्य मंत्रालय, केन्द्रीय सचिवालय, नई दिल्ली।



गुजरात

कवि : श्री उमाशंकर जोशी
रूपान्तरकार : श्री नरेन्द्र शर्मा



बामना, साबरकांठा (उत्तर गुजरात) में २१ जुलाई १९११ में जन्म। १९३८ में एम० ए०। विद्यार्थी-जीवन में असहयोग आंदोलन में भाग लिया। १९३० से ३४ के बीच दो बार जेल-यात्रा। १९७ से १९४६ तक शिक्षक तथा प्राध्यापक रहे। १९४७ से 'संस्कृति' पत्रिका के संस्थापक सम्पादक। १९५४ में 'गुजराती भाषा भवन' के प्रमुख। १९३६ में 'निशीथ' पर रणजीतराम सुवर्णपदक मिला; १९४५ में महिंद पारितोषिक तथा १९५३ में नर्मद सुवर्णपदक 'प्राचीना' पर मिला। प्रकाशन : विश्वशांति (१९३१); गंगोत्री, निशीथ, आतिथ्य, वसंतवर्षा आदि काव्यसंग्रह; सापना भारा (ग्यारह एकांकी); श्रावणी मेलो (कहानियाँ); आखो—एक अध्ययन (आलोचना); प्राचीना (सात संवाद-काव्य); पुराणों में गुजरात (शोध); गुले पोलान्ड-मिस्कियेविच के क्रिमियन सॉनेटों का अनुवाद (१९३६); उत्तररामचरित तथा शाकुन्तल के समश्लोकी अनुवाद। पता: 'संस्कृति', अहमदाबाद-६। साहित्य अकादेमी के गुजराती सलाहकार बोर्ड के प्रमुख तथा कार्यकारिणी बोर्ड के सदस्य।



विश्वशांति

त्यां दूरथी मंगल शब्द आवतो
शताब्दिओनां चिरशांत घुम्मटो
गजावतो चेतनमंत्र आवतो ।

प्रकाशना धोध अमोघ भोलती,
धपे धरा नित्य प्रवासपंथे
भूमो रही पाछल अंधकारनी
टूटो पडे भेखड अर्ध अंगे ।

विराट खोली निज तेज आंख
कल्याणनो मंगल पंथ दाखवे
अ तेज पीने निज सृष्टि खीलनी,
जोती घडी अ वधती उमंगे ।

अंगे लगाव्या हिमलेप शीला,
ज्वालामुखी किन्तु उरे ज्वलंत,
मैयातणे अन्तर शुं हशे पीडा ?
के सृष्टिचिंता उरमां अनन्त ?

विश्राम काजे विरमे नहीं जरा,
अकथ्य दुःखे अकलाय हैडे
उच्छ्वासथी वादलगोट ऊडे
ने दूर फेले जलनील अंचला ।

भमे भमे दुःखतपी वसुंधरा,
डगो भरे तेजपथे अधीरां
अ तोय पूरा न थया प्रकाश,
अंधारमां आथडी भूतसृष्टि
आ रक्तरंगी पशुपंखी प्राणी
पुकारता सौ नखदंत नाश ।

ने लोही पीने उछरेल घेलो
आ लाङ्गिली मानवता धरानी
इतिहासनी भूलभुलामणोओ
रचे, अने कँइ जगवे लडाइओ ।

भोलो स्वहस्ते निज अंग चोरे
ने भीजतो आत्मतणा रुधिरे
जल्या करे चोदिस कोटि क्लेश
शमे न ओ आग अबूझ लेश
को सिंचता जीवनवारि संत
तोये रहे पावक ओ धगंत
पगाम देवी पयगम्बरो वद्या
शमी न ओ भोषण विश्ववेदना,
त्यां दूरथी मंगल शब्द आवतो
युगोतणी कैक पडी कतार
आवे ध्वनि ओहनी आरपार
तुं पाप साथे नव पापी मारतो ।
अ मंत्र झील्यो जगने किनारे
ऊभेल योगी पुरुष अनंके,
आरण्यकोओ ऋषिमंडलोओ,
सुणेल बुद्धे इशुओ महावीरे,
न तो य निद्राजड लोक जाग्यां
डूबी गयो मंत्र अनंततामां ।
अ आज पाछो ध्वनि स्पष्ट गाजतो
आ युद्धथाकया जगने किनारे
गांधीतणे कान पड्यो उरे सर्यो,
ने त्यां थकी विश्वविशाल विस्तर्यो
युगो युगोनी तपसाधना फली
जरी महा अन्तरवेदना शमी ।

विश्व-शान्ति

वह दूरागत, मंगल-शब्दों की ध्वनि आती,
शताब्दियों के गुम्बद की चिर शान्ति गुंजाती।

कर अजस्र धारा प्रकाश की आत्मसात् नित
धरा धा रही है प्रवास के पथ पर अविजित।
अंधकार के ढूह ढह रहे हैं कगार-से,
पर न रुकी है प्रगति-धार, तम के पहार से !
खुले हुए हैं तेजोमय लोचन विराट के,
दिखें मोड़ जिससे मंगल-कल्याण-बाट के।

तेज-वृष्टि कर पान, सृष्टि हो रही प्रफुल्लित,
देख रही है धरती माता, सुख से प्रमुदित !
शोभित है मां, अंगों पर हिम-लेप लगाए,
अन्तराल में ज्वाला जी की ज्योति जगाए।
क्या जाने मां के मन में क्या पीर समाई ?
चिन्ता में है निहित, सृष्टि की सतत भलाई !

है शविराम अथक श्रम अविरत, अकथ पीर है।
किस दुख की अकुलाहट से अंतर अधीर है !
उच्छ्वासों में मँडलाते बादल-दल-मंडल,
अति गति से फहराता पीछे चल जल-अंचल।
भ्रमती है, भ्रमती है, दुख से तपती धरती,
बढ़ती है प्रकाश-पथ पर डग पर डग भरती !
फिर भी भूतल पर प्रकाश पर्याप्त नहीं है !
क्या डगमग-पग भूत-सृष्टि तम-व्याप्त नहीं है ?

रक्त-रेंगे नख-दंत और पशु-पक्षी-प्राणी !
पली रक्त पर, मत्त मनुज की जाति सयानी !
इतिहासों की भूलभुलइयां रचती आती,
युद्ध ठान कर, युग युग वैर-वह्नि सुलगाती !
अपने अंग चीरती है अपने ही कर से,
रक्त-स्नात अपने ही लोहू के निर्भर से !
कोटि क्लेश की अबुझ आग जलती ही जाती,
संत बचन बरसे, पर शीतल हुई न छाती !

देवदूत आए, लाए संदेश-चेतना,
पर न बुझी ज्वालामय भीषण विश्व-वेदना !

पर दूरागत मंगल-शब्दों की ध्वनि आती,
युग-युग की प्राचीर चीर, संदेश सुनाती—
हनन पापियों का, न करेगा शमन पाप का,
हिंसा से होगा न निवारण विश्व-ताप का ।
वह दूरागत, मंगल शब्दों की ध्वनि आती,
शताब्दियों के गुंबद की चिर शांति गुंजाती !

यही मंत्र था, जिसे योगियों ने अपनाया;
क्षितिज-छोर पर खड़े आर्ष ऋषियों ने पाया;
महावीर ने और बुद्ध ने सुना, सुनाया ।
मंत्र गया, निद्रालस जग की गई न माया !

पर दूरागत मंगल-शब्दों की ध्वनि आती,
शोणित-नद के तम-पंकिल तट से टकराती ।

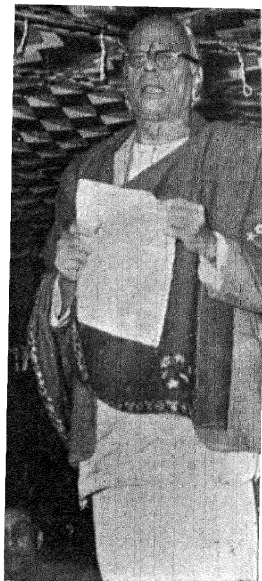
गांधी के मन-प्राणों में ध्वनि आन समाई !
निखिल विश्व के प्लावन को गंगा बन धाई !
वह दूरागत मंगल-शब्दों की ध्वनि आती,
शताब्दियों के गुंबद की चिर-शांति गुंजाती !

पुण्य उदय हो रहे युगों के, सुफल साधना !
हुई अंकुरित विश्वशांति की पुण्य-कामना !

तमिल

कवि : श्री सुब्रह्मण्य योगी

रूपान्तरकार : श्री सुमित्रानन्दन पंत



१९०४ में शंकगिरि, सेलम, में, एक सुविख्यात कवि-घराने में जन्म। आपकी एक प्रसिद्ध काव्यकृति है 'अहल्या', जिसमें विषय का एक नया दृष्टिकोण प्रस्तुत है। कविताओं का एक संग्रह 'तमिल कुनरी' प्रकाशित हुआ है। साहित्य पर आपने अनेक विचारपूर्ण प्रबन्ध प्रस्तुत किए हैं। आपकी प्रतिभा बहुमुखी है। आपने कई फिल्मों के लिए गीत और संवाद लिखे हैं। उमर ख्याम की श्वाइयों का आपने तमिल में सुन्दर अनुवाद किया है।



वेल्लक कालि

अलकमेन्नुम् अडलिनकुकोरुयिराय् निन्ड्राल्
अण्मैतनक्कुरैविडमायुलकै वेन्ड्राल्
अलकिनुच्चिमलै अिमयच्चिकरम् पूण्डाल्
अलवुपल नदिकलिन् मुत्तारम् आण्डाल्

अलकु विन्द्यमामलै उड्याणम् चुट्रि
अेलुन्तोडु मेलैमलै च्चेड्कोल् पट्रि
निलविय मुप्पुरमुम् कडल्पणिय प्पात्तिल्
नित्य कन्नि भारतत्ताय् कलि कोण्डात्तिल्

मुन्न मुन्नम् निनैवदन् मुन्नमे
मुन्नुङ्कोडि प्पल्लायिरमाण्डुकल्
मुन्नमेन्ऱु पलञ्चेय्ति तेडुवार्
मुडिवु कूरिड क्कूशिडुमुन्नमे
मुन्नमेन्ऱिडिल् मानिडच्चादिदान्
मुन्नि नाकरिकम् पेरु मुन्नमे
मुन्नमेयतन् मुन्नमे मुन्नमं
मुदन् मुदल् मक्कल् तोन्नियकालत्ते

आतिनालिनिर् पेरिरूळकेङ्गणुम्
अडन्तं कारिरूट् कङ्गुलिल् वालन्त नाल्
जोति जानक्कदिरवन् कीलित्तै
तोन्निरप्पारतनाट्टिल् ओलिन्तनन्
वोतितोरुम् चेलुमरै क्कोतमाम्
वोडुतोरुम् निरैचेल्व क्कूडमाम्
मादरारकल् अमैतियिन् वीरमाम्
मान्दर् तेल्लिय चिन्तैयिन् धीरमाम्
रामन् काट्टिय चेन्नेरित्तूय्मैयार्
राजनीति मनुमुरै कण्डवर्
वोमन् तन्द विरल् कोलुम् नेञ्चिनार्
विजयन् नन्दिडुम् विल्लोलि त्तिण्मैयार्
कामन् तन्द कविनुरू मेनियार्
कादल् तन्दिडुम् करपोलि क्कन्नियार्
सामगान च्चङ्गीत क्कडलिनार्
चावुमाडल कोलुम् तिरल् मेविनार्

कण्णनरुल् गीतैनेरि कण्डतिन्द नाडु
 करूणैयूरुवाम् बुद्धर् अन्बु कण्ड नाडु
 पण्णिलुयर् कालिदासन् पुकलुम् भूमि
 पाविलुयरवान्कम्बन् कावियङ्कोल भूमि
 तिण्णमुरू वल्लवरिन् चेम्मैयूरुम् देशम्
 सीतं कण्णगि यौवै देविकलिन् देशम्
 वण्णमिकुवानमुत वाल्वु तनै मुनिवर
 मण्णिले कण्डुकलि कोण्ड तिरूनाडु

येन्नाट्टुम् मुन्नाट्टुम् पोन्नाट्टिन् मेलाम्
 येकिल् नाट्टुमिचैनाट्टु मेट्टुमेलाम् नाट्टुम्
 अिन्नाट्टिन् वलङ्कण्डुमे नाट्टार् वन्तार्
 अ्रेमाट्टि वचै नाट्टि अ्रेमैयाट्टुम् कोण्डार्
 मालैक्कङ्गुलिन् नाट्टिन्र् काट्टिय
 मायजालमयक्किल् मयङ्गिये
 कालैप्पेरोलिक्काट्चि मरन्दुमे
 कारिरूट्टिलडिमै कलाकिनोम्
 पालैक्कानल् वलञ्चेय तोन्निये
 पारन्द जीव नदियेङ्गल् गान्धियिन्
 चीलङ्कूट्टि विड्तल पेट्टनम्
 चेम्मैयाङ्कुडियाट्चि वकुत्तनम्
 तन्दै चेल्वम् पिल्ल काक्कुम् तन्मैपोल गान्धियार्
 तन्द चेल्वम् पाडुपट्टु कात्तिडल् नम् कडमैये
 अग्नि भेन्नालुमडिमै वाल्विङ्गेयितडातवण्णमे
 पणिपुरिन्दु पाडुपट्टु भारतत्तै काप्पमे
 नैजिलेरूम् पञ्चशीलम् नेरियिलेरूम् तूयमैये
 वञ्चकङ्गल तुञ्चवाल्विन् माट्चिकाणल् वायमैये
 अ्रेट्टुतिक्कुम् वट्टिकोट्टु अ्रेङ्गुमिम्बम् पोङ्गवे
 तिट्टुमिट्टु चेल्लपुरिन्तु चीर्त्तिकाणवम्मिने

मक्कलाट्चि मक्कल यारुम् मन्नरिन्द नाट्टिले
 मक्कल माट्चि पेट्रू वालमक्कल् यारुम् वम्मिने
 तिट्टम्काण लरचियल् चैयलिकाणल् मक्कले
 चट्टम् काण लरचियल् शान्तम् काणल् मक्कले
 नीतिकाण्बदरचियल् पुतुमै काणल् मक्कले
 पोतम् काण्बदरचियल् पुतुमै काणल् मक्कल
 निदि कोडुत्तुम् मति कोडुत्तुम् गति कोडुत्तुम् आट्चिये
 विदिवकुत्त वलि चेलित्त विलैवुकाण वम्मिने
 वील्ह वील्ह मिडिमैयावुम् वील्ह वील्ह वील्हवे
 वाल्ह वाल्ह कुडिमैयाट्चि वाल्ह वाल्ह वाल्वे



भारत माता

है देह विश्व ! आत्मा है भारत माता !

यह सत्य-धर्म धारिणी धरा अति पावन,
 सब जग को लगती मनोहरा मन-भावन,
 विधि नदियों की मुक्तामाला पहनाता !

कटि में करधनी सुशोभित है विध्याचल
 सह्याद्रि-माल का राजदंड है कर-तल,
 श्रीचरण चूमता, विनत सिन्धु लहराता !

था वह अनादि-सा आदि, भाव की ऊषा,
 भव को न मिली थी जब संस्कृति की भूषा,
 तब उदित हुआ रवि यहां स्वरण बिखराता !

वन ग्राम, नगर में गूंजीं वेद-ऋचाएं,
 हर गृह में दमकीं श्री की दीपशिखाएं,
 धृति नारि, धर्म से था पुरुषों का नाता !

हम अभित हुए, अस्ताचल वाले देशों को जब देखा;
अरुणाचल की छवि बनी नयन में धुंधली कंचनरेखा;
तब आया ज्योति-पुरुष बापू, चेतन का सूर्य उगाता !

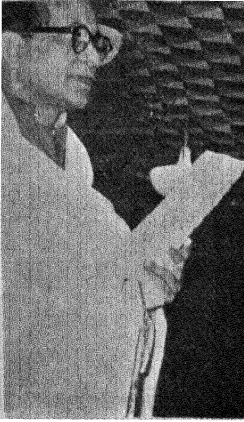
है राष्ट्रपिता ने सौंपी हमें धरोहर,
अब यह स्वतन्त्रता रहे हमारी होकर;
तुम राष्ट्र-धर्म के और मम के ज्ञाता ।

श्रम और प्रेम का संबल; शक्ति हमारी !
अपने भविष्य में अविचल भक्ति हमारी !
यह देश मुक्ति के गीत रहेगा गाता !

हो पंचशील प्रतिध्वनित हमारे मन में,
अब सद्बिचार, सत्कर्म बने जीवन में,
संकल्पसूर्य से विघ्न-तिमिर छूट जाता !

दश दिशि गूंजा जय-घोष, हृदय हर्षाए ।
सहयोग सफल हो, जीवन मंगल गाए ।
संयोजन ही जग-जीवन पर जय पाता ।

यह लोक-राज्य आलोक-राज्य, जन राजा !
श्रम-सीकर का मणि-मुकुट माथ पर साजा !
जा ! विदा, दैन्य ! मैं गीत विजय के गाता !



कवि : श्री देवुलपुल्ल कृष्ण शास्त्री

रूपांतरकार : श्री सुमित्रानंदन पंत

पीठापुरम् (पूर्व गोदावरी प्रदेश, आंध्र राज्य) में १ नवंबर १८९७ को जन्म । १९१८ में मदरास विश्वविद्यालय से बी० ए० । ववियों के वंश में जन्म; ब्रह्मसमाज के प्रभाव में समाज-सुधार में सक्रिय भाग । 'साहिती समिति' तथा 'नव्य साहित्य परिषत्' के सभापति; प्रकाशन : कण्णीरु (गीतिकाव्य संग्रह); कृष्णपत्तमु (गीत तथा कहानी-संग्रह); प्रवासमु ऊर्वशी; महर्ता (कविता-संग्रह); कई नाटक । 'भारत-वाणी' चित्र के तेलुगु भाष्यकार । पता : सिमला हाउस, १३३, हवीबुल्ला रोड, मदरास-१७ ।



ई नाडि ई भुवि

चिन नाटि भाव वल्लिनि पूचि नदि, वाडनिदि, वासनलु वीडनिदि ।
 ओकंडु कोरिक्, नाल्गुदिकुल भूभुवन मंडलवलेशमुनु
 बदलक ये तिरिगि, प्रति गेह गेहालि पदमागि, प्रति हृदय द्वार
 तोरण मट्टे द्रोसि लोनिक् जोच्चि, नालोनि स्नेह क्षीर मोक्किक्
 ओक्किन्त ओलक बोसि, "अनुगु सोदर, मरलिराना" यटन्सु
 सेलवडिगि सागिपोयडु चिर पथिकुडु कावलयूनत्सु; आश
 आकाशमंत, पटिमक्षुद्र विहंग मप्पटिकि, नेडु

घुरुम गंगा भरी धर्म गोदावरी
 सिक्त सहजीवनोसक्त भारत भूमि
 नोक्कपरि हिमशिखरि नेक्क, सेतु उदाक
 द्रुक्कु सारिचि, पूरिचि गलकाहलिक—
 विधुरप्रिय श्रवो वीधुल, मगडस्वादु वाक्यम्मुल नूदगलनु,
 निलुप गागलनु माणिक्य दोपावडि, अध मनोमदिगांतरमुल,
 कर्कश हृदय जांगलमल, शीतल स्नेह दुग्धम्मु वर्निम्पगलनु,
 विरचिपगलनु विद्वेष बतरिणिकि अड्डुगा गाढ सौहार्दसेतु ।
 विटनि निलिचि समस्त दिक्कटुल पिलिचि, सारे माने
 जीवत्सरस्वतिनि मलचि कविनि नेनै पुराण वैणविकुनट्लु ऊहलुन्न
 जगम्मन्त स्नेहमन्त्र ।

निन्न मृन्ना दाक मन्नुलो
 मन्नैयुन्न प्राण
 शंख मुत्तिनाडु,
 मानवुंडु गर्वमाणिक्य
 कोटीरधारि नेडु, विजयहारि नेडु !

ईनाडीभुवि बानिसीडु मरिलेनेलेडु, ओक्कोक्क फालानन—
 पावकनेत्र मुन्नादि पगलगाल्पग ओक्कोक्क डेन्दानन् क्षीरसमुद्र
 मुन्न दवधुलाटग ईमान वुड निर्मात् विद्रात नेत मरि ताने
 भोक्त-लोकम् मुनन् ।

रवस्ति जगत्तुनकगु, श्रीरस्तु सदा शातिरस्तटन्मु
 वेलयु विश्वस्तुत भारत वाणि सुमस्त वकम् वोले
 लोक मस्तकम् पडन् ।



कल्पना और कामना

कोमल लतिका थी बाल-सुलभ कल्पना, हृदय में छाई;
 जिस पर अक्षय-सौरभ-स्वरूप कामना कली मुसकाई !
 कामना यही थी, देश देश देखूं सँग सँग सौरभ के;
 पा सकूं अरवि का आर-पार, छू सकूं छोर मैं नभ के !

प्रत्येक द्वार पर पहुँच सकें मेरे दो पग पथ-चारी;
 प्रति द्वार और प्रति हृदय खुले, जा पहुँचे जहाँ बिहारी !
 दूँ स्नेह-सुधा, लूँ विदा और चल दूँ मैं अपने पथ पर;
 आकांक्षा का आकाश, भाव आरूढ़ हंस के रथ पर !

वह दिन न रहे अब, किन्तु वही कल्पना कामना मन में;
 मैं देख रहा हूँ पुण्य-देश भारत रत सहजीवन में !
 श्रम-साध्य स्वेद की दिव्य धार बन कर गंगा बहती है;
 गोदावरि की हर लहर ज्ञान की गाथाएं कहती है !
 मैं देख रहा हूँ, तुंग हिमालय शृंगों पर पग धर कर;
 कन्यान्तरीप दूरस्थ, शंख वाणी का अधरों पर धर !

मेरे स्वर में विरहाकुल प्रेमी-जन के प्रति संवेदन,
 मेरे गीतों की मंगल-ध्वनि में सबके हित सुख-वर्षण !
 है वर्ण वर्ण मणि-दीप, छंद मणि-माला की दीपाली,
 मानव के मानस में न रहेगी अब मावस अंधियाली !
 मंत्री के शान्तिमुधारस से मैं सींचूँगा मरु-प्रान्तर;
 मन जिनका पत्थर से कठोर, कर दूँगा उन्हें सुधाधर !
 मैं द्वेष-घृणा के तीरों पर बाँधूँगा सेतु प्रीत का,
 निर्भीक खड़ा फहराऊँगा मैं उस पर केतु गीत का !

मेरे गीतों में उसी वेणुधर की होगी मधुवाणी,
 जिसकी वाणी से निकली थी जीवन-जमुना कल्याणी !
 जन आज जनार्दन बना, मृत्तिका पांचजन्य बन जागी !
 था जो पाँवों की धूल, बना चंदन उसका अनुरागी !
 जय घोष कर रहा मनुज, हुआ अब दसों दिशा उजियाला,
 मणि-मुकुट शीश पर शोभित है, उर पर शोभित जयमाला !
 अब कौन किसी का दास, मुक्त मानव-समाज के सब जन;
 सब के ललाट पर खुला हुआ है वह्नि-नयन रिपुसूदन !
 पर जन-जन के मन में असौम्य अब क्षीर-सिंधु लहराता;
 जन ही जीवन का निर्माता, जन अपना भाग्य-विधाता !
 जन अपनी जीवन नय्या का निर्यामक, अपना नेता;
 अपने श्रम के मीठे फल का अधिकारी, जीवन जेता !

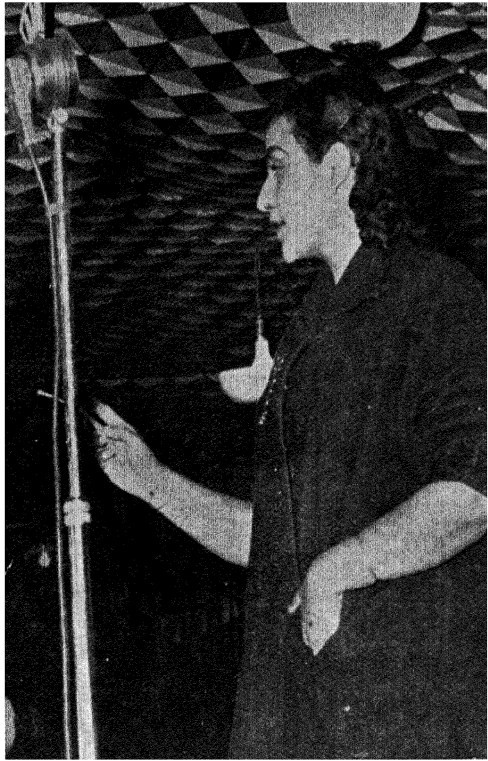
पंजाबी

कवयित्री :

श्रीमती अमृता प्रीतम

रूपांतरकार :

डा० हरिवंशराय वच्चन



गुजरानवाला (पश्चिमी पंजाब) में ३१ अगस्त १९१६ में जन्म। देश के विभाजन के बाद से दिल्ली के आकाशवाणी केन्द्र से संबद्ध। प्रकाशन : तेरह कविता-संग्रह; तीन कविता-संकलन; तीन बड़े और एक छोटा उपन्यास; दो कहानी-संग्रह; एक जीवनी; एक लोकगीत-संग्रह; पंजाबी साहित्य के विकास पर एक पुस्तक; हिंदी से पंजाबी में अनूदित एक उपन्यास। पंजाबी की लोकप्रिय कवयित्री। पता : ८।२० वेस्ट पटेल नगर, नई दिल्ली। साहित्य अकादेमी के पंजाबी सलाहकार बोर्ड की प्रमुख।



नवीं सवेर

धरती पासा परतिया, धरती दी एह बात ।
सरघी सुक्खाँ भरी वे, अज जशनां वाली रात ।
धरती अंगण मौकला, लोक बडा परवार,
भारत पीह्डा रांगला, अंगण दे विचकार ।
चौदां अंग सहेलियां, उच्चे पीह्डे बेहिण,
कम्बीं भाह छुपाइए, लाटां बल बल पैण ।
हरफ सुनहरी इन्हां दे, अमन, अहिंसा, त्याग
मसिया वाली रात विच, जग दे जिवें चिराग ।
चश्मे वाकर फुट्टी, इलम हुनरदी तांघ,
सभ्यता ते संस्कृति, चमके सूरज वांग ।
नदीआं जीकण सत्तमुरां, धरती जिऊं कोई गीत,
भर भर वडे चानणां, एह पूर्व दी रोट ।
समा सुनावे बैठ के, एह धरती दी बात,
भारत उते पई सी, सौ सालां दो रात ।
परी सुतंतरता दी सुत्ती पलड़े तान,
पंघ चीर के पंडचिआ, लोकराज इक ज्वान ।
लोकराज शहजादड़ा ज्यों ही छोहे अंग,
टुट्टे जादू टूनडे, जागपई ओहदी मग ।
करन बहारां चौरियां, चानण धोवे पैर,
लोकराज दे बुत्त दीं, धरती मंगे खैर ।
सरघी वेला वेखदा, नवें जुग्गाँ दा मुख,
जीवे फेर मनुक्खता, जीवे फेर मनुक्ख ।
आखाँ पूरब देस नूं चानण नवाँ खलेर,
जीवन कर जाए चानणा, एह जु नवीं सवेर ।



नया सबेरा

धरती करवट ले उठी, धरती की यह बात
 आज सुखों का प्रात है, ओ जशनों की रात ।
 धरती का आंगन बड़ा, बड़ा लोक परिवार,
 उसमें रंजित पीठिका, भारत है साकार ।
 चौवह अंग सहेलियां, उच्च पीठिकासीन,
 जिनकी कुंतल-ज्योति को कर न सके तृण क्षीण ।
 स्वर्णाक्षर में लिख रही, 'अमन', 'अहिंसा', 'त्याग',
 जैसे काली रात में जगमग जगे चिराय ।
 भरना बन फूटी यहां, ज्ञान कला की प्यास,
 संस्कृति एवं सभ्यता का रवि-तुल्य प्रकाश ।
 नदियां इसकी सप्त स्वर, धरती इसका गीत,
 ज्योति लुटाना खोल दिल यह पूरब की रीति ।
 समय मुनाता बैठकर धरती की यह बात,
 भारत पर थी छा गई सौ बरसों की रात ।
 स्वतंत्रता की थी परी सोती चादर तान,
 पंथ चोर पहुँचा वहां लोकराज बलवान ।
 उस कुमारवर ने छुए ज्योंही उसके अंग,
 जगो परी वह कर सभी जादू टोने भंग ।
 झलती चँवर बहार है, धोता चंदा पेर,
 लोकराज के मूर्ति की भूमि चाहती खैर ।
 आज सबेरा ला रहा नवयुग नवल विहान,
 जागे फिर इंसानियत, जागे फिर इंसान ।
 कहती पूरब देश से, ज्योति नई विस्तार,
 जिससे फिर जीवन जगे, करे नया शृंगार ।

Post Graduate Library
 College of Arts & Commerce O. S.
 Hindi Seminar Library
 OSWALDA

No.....



बंगला

कवि :

श्री बुद्धदेव वसु

रूपान्तरकार :

श्री हंसकुमार तिवारी

कोमिल्ला (पूर्व बंगाल) में ३० नवम्बर १९०८ में जन्म। अंगरेज़ी में एम० ए० तक ढाका में शिक्षा। कलकत्ते में तथा अमरीका में अंगरेज़ी साहित्य के अध्यापक। दिल्ली और मैसूर में प्रौढ़ शिक्षा पर यूनेस्को विचारगोष्ठी के परामर्शदाता। बंगला में गत बीस वर्षों से नियमित रूप से प्रकाशित 'कविता' पत्रिका के संस्थापक-संपादक। निखिल-बंग-साहित्य-सम्मेलन ने आप के 'शीतेर प्रार्थना : बसन्तेर उत्तर' को पुरस्कृत किया। कविता, आख्यायिका, उपन्यास, साहित्य-समीक्षा, रम्य रचना आदि की सौ से अधिक पुस्तकों के प्रणेता। अंगरेज़ी में बंगला साहित्य पर एक ग्रंथ 'ऐन एकर आक़ ग्रीन ग्रास' के लेखक। बंगला के विख्यात कवि। पता : कविता-भवन, २०२ राशबिहारी ऐवेन्यू, कलकत्ता-२६।

समर्पन

नदीर बुके बृष्टि पड़े
जोयार एलो जले
लुकिये राखा आशार मतो
बांशेर फांके इतस्ततः
एकटि दुटि क्षीन जोनाकि
क्वचित् नेभे ज्वले
आकाश भरा मेघेर भारे
विद्युतेर व्यथा
गुमरे उठे जानाय शुधु
अबोध आकुलता
आकार-हीन हिंस्र खल
अनिश्चित फेनिल जल
मिलिये गेलो अदृष्टेर
मौन इसाराते
तोमाय आमि रेखे एलेम
इश्वरेर हाते ।

ताकिये थाका एकटि दीप
ज्वलछे छोटो घरे
एकटि हात एलिये आछे
कम्पमान बुकेर काछे
छिन्न स्मृति शेलाइ करा
शीतल कांधार परे
मने पडार इन्द्र जाले
भापसा होलो द्वार
आमार हाते लाफिये ओठे
तीक्ष्ण तलोयार
सुदूर काले हारिये जावा
देशान्तरी उठलो हावा
छेलेबेलार गन्ध भरा

अन्धकार राते
आमार प्रेम रेखे एलेम
इश्वरेर हाते ।

पालेर मांझे भविष्येर
गर्भ उठे फूले
अनागतेर रुद्ध चापे
पाटातनेर पांजर काँपे
त्रस्त माछेर अस्थिरताय
गोलुई उठे दुले
कठिन हाते नाविक धरे
आकांक्षार हाल
कपट स्रोते भासे आमार
मृत देहेर छाल
हृदयतले दांडेर टाने
अमर नाम प्रलय आने
ढेउएर आर दिनान्तेर
माताल संधाते
आमार प्राण रेखे एलेम
इश्वरेर हाते ।

उलटो दिके छुटलो आमार
आंधार आराधना
असीम नील घुमेर परे
यन्त्रनाय जडिये धरे
मुक्तिहीन जागरनेर
मूर्ख प्रतारणा
तबुओ आछे एकटि घर
कुंजलताय घेरा
दावाय बसे जटला करे
पुर्व पुरुषेरा

तांदेर मृदु फिशफिशानि,
पडुक झरे सावधान
हाजार बार संशोयेर

अन्ध अजानाते
आमि तोमाय रेखे एलेम
इश्वरेर हाते ।



समर्पण

रिमझिम लगी नदी के ऊपर
ज्वार उठा है जल में
जैसे गुप्त रखी आशा हों
यहां वहां बांसों के फांकों
कभी एक दो टिमटिम टिमटिम
जुगनू बुझते बलते

भरा गगनतल व्यथा भार से
बिजली का जी जलता
भर कराह जतलाता केवल
अंतहीन आकुञ्चता
वह आकार-विहीन, हित्र, खल
बेहद बेहिसाब फेनिल जल
मौन इशारे से अदृष्ट के
गुम हो गया बिखर के
तुम्हें छोड़कर आया हूँ मैं
हाथों में ईश्वर के ।

अपलक दिया एक जलता
छोटे से घर के भीतर
एक हाथ बेबस है लुढ़का
कंपमान छाती के ढिग जा
जर्जर स्मृति की सिली हुई
शीतल कथरी के ऊपर

मृदु बिसुरन के इन्द्रजाल से
 धुंधला हुआ किंवदन्ती
 लपक हाथ में उठ आती
 मेरे तीखी तलवार
 गुमी सुदूर काल के हियतल
 देशांतरी बयार पड़ी चल
 छटपट की खुशबू से महमह
 रात अंधेरी भर के
 अपना प्रेम छोड़ आया मैं
 हाथों में ईश्वर के ।

उभर गर्भ आता भावी का
 पालों की सलवट में
 अन आगत की रुद्ध चाप से
 पंजरे कपटे नदी पाट के
 हिलहिल उठती पलुई
 भीता मछली की छटपट में

अभिलाषा-पतवार सख्त हो
 नाविक लेता थाम
 कपट खोत में बहता मेरे
 मृत शरीर का चाम
 हिय में डांडों के कर्षण से
 प्रलय अमरता आता है ले
 लहर और सीमा के—
 मतवाले संघर्षों पर से
 अपने प्राण छोड़ आया मैं
 हाथों में ईश्वर के ।

तिमिर अर्चना भाग चली
 मेरी विपरीत दिशा को
 नील असीम नींद के ऊपर
 विकल यंत्रणा से हो कातर
 लिपट पकड़ कर मुक्तिहीन
 जागृति की मूर्ख दया को

फिर भी खड़ा एक घर साबित
कुंजलता का घेरा
जहां लगाते जमघट, डाले
पूर्व पुरुषगण डेरा

उनका वह धीमा धीमा स्वर
सजग बरसता रहे निरंतर
अनगिन भय संशय के
अंधे अनजाने से स्वर में
तुम्हें छोड़ कर आया हूँ मैं
हाथों में ईश्वर के।



मराठी

कवि : श्री यशवन्त दिनकर पेंढारकर

रूपान्तरकार : श्री प्रभाकर माचवे

चाफल (उत्तर सतारा) में ६ मार्च १८९९ में जन्म ।
मराठी में रवि-किरण-मंडल के एक प्रमुख सदस्य । १९३५
में शारदा-मंडल बड़ौदा के सभापति; १९५० में बम्बई
मराठी साहित्य-सम्मेलन के सभापति; बड़ौदा सरकार द्वारा
राजकवि के नाते १९४० में सम्मानित । प्रकाशन : सात
कविता-संग्रह (जिन में 'यशोधन' बहुत प्रसिद्ध हुआ); तीन
खंडकाव्य, गद्य के दो ग्रंथ और बच्चों के लिए सात पुस्तकें ।
पता: १९६।३४ सदाशिव पेठ, पूना-२ ।



पुकार

“आलों मो, आलों मी” करि पुकार कोण तरी ?

येणारा नोहे हा राजा वा माधुकरी

हा पुकार घुमवी नरहृदयीचा नारायण

दाहि दिशा करिती पडसादांनी पारायण

हां पुकार सांगतसे सरला दुरितांधकार

तेजाच्या झारींतुन वर्षत चेतन्य-धार

ता म्हणतो भयभीतां “झणि उघड टाक दार

व्यर्थ तुझी व्हायची न ह्यापुढती लूटमार

तेवि ना क्षमा तयास होउ म्हणे जो चुकार

वृक्षाच्या वाढीला बांडगुलें जाच, भार

खाटल्यावरी कुणास नाही देणार हरी
 श्रमिकांच्या पाठोशी मात्र उभा गिरिधारी
 घामांतुनि दरवलल कस्तुरिचा घमघमाट
 आणि झलंबेल तसा रत्नांचा लखलखाट
 रे, नांगर फालानें निज ललाट-लेख लिहा
 काली ही कामदुधा होते की नाहि पहा”
 ही ग्वाही देणारा ठाके हा कामकरी
 निधारे ह्या नटला साभिमान शेतकरी

“आलों मी, आलों मी” कोण करी हा पुकार
 दुबलयांना धीराचा वाटावा जो विसार
 “लाविसि कां भलीं कर ? कां अश्रू ढालतोस ?
 भाग्यास्तव कोणाचे उचलतोस पायपोस ?
 रे मूढा, ह्यापुढती काय हवी लाचारी ?
 रे, ज्याचा तोच इथें—कोण दुजा उद्धारी ?
 येथ आडकाठी नच आवडत्या उद्योगा
 ग्रह राशी सर्वकाल पुरवितील शुभयोगा
 ग्रंथरुणास्तव कोणा नलगे ती दगड-धूल
 असलें तर फक्त पूर्वसंचितांत शोकमूल
 एरव्हीं न कांही उणें राहणार संसारीं
 पोहतील अवध संतोष-सुखा माझारीं”

हा पुकार घुमवी नरहृदयीचा नारायण
 दाहि दिशा करिती पदसादांनीं पारायण

“आलों मी, आलों मी !” देई ही कोण हांक ?
 हाके मधि भरली त्या जरब कुणा, काय धाक !
 “येथ अग्रपूजेचा मानकरी नच धनाढ्य
 हार-तुरे त्याजलाच जनहितकर जो गुणाढ्य
 रेटणार नाहि कुणी कोणाचा येथ बांध
 पीडतील नच पुढतीं दंडहस्त दुर्मदांध

न्यायदेवि ना गणील मतलबी कटाक्ष-खुणा
 शास्त्यामधि जनतेचा पुरता निर्धास्तपणा
 फांकतील बूद्धीचे जे जे उन्मेष नवे
 ठरतिल ते सुहृदांचे मनुजा कल्याण-दुवे”

ललकारत आला युगनिर्माता भालदार
 खडसावुनि सकलांना सांगत की व्हा हुशार

“आलों मी, आलों मी ।” कोण करी हा पुकार
 जो कां क्षतविव्हरांस दिव्य औषधोपचार
 “आता रणमैदानीं थाटतील उद्यानें

शस्त्रास्त्रें तरि कशास ऋषिमुनिच्या अस्थिविणें ?
 कर्तव्याविण कोणा नाहि जात, नाहि धर्म
 दुस-याच्या क्षेमाचे अध्याहृत ज्यांत वर्म
 प्रभुच्या अवतारास्तव संसृतिच्या मंदिरांत
 पुरुष-स्त्री जणु नंदादीपांतिल जोड वात
 पूर्व थोर संस्कृतिची चित्तामधि चाड धरा
 का विलंब मग व्हाया स्वर्गाहुनि रम्य धरा”

हा पुकार घुमवी नरहृदयीचा नारायण
 दाहि दिशा करिती पडसादांनीं पारायण

“आलों मी, आलों मी !” काल नवा देड साद
 ह्या मराठ कवनीं तो ऐका भावानुवाद



पुकार

‘आया मैं, आया मैं’, कौन कह रहा पुकार
 आनेवाला न अरे राजा या भिक्षु-सार ।
 यह पुकार उसकी जो नर-उर में नारायण
 दशदिशि में गुंजित है प्रतिध्वनि का पारायण ।
 यह पुकार कहती है बिलमा वुरितांधकार
 तेजस् की भारी से बरसी चंतन्य-धार ।

वह कहता भीतों से: “रख दो अब खुले द्वार
व्यर्थ नहीं होगी अब तेरी कुछ लूटमार।
अब न क्षमा उसको जो काम से बचे असार
वृक्षों के विकसन में पर-पुष्टक कष्ट, भार।
खटिया पर बंठे को देगा नहीं कोई हरी
श्रमिकों के पीछे सदा खड़ा हुआ गिरधारी।
उनके पसीने से कस्तूरी महकेगी
पसीने की बूंदों से रत्नमाल चमकेगी।
रे, हल के फाल से ललाट-लेख लिखो, लिखो
काली मिट्टी भी कामधेनु बनती देखो।”
आये यह साक्षी बन कमकर, मजदूर,
निश्चय लेकर आये गरबीले ये किसान

‘आया मैं, आया मैं’, कौन कह रहा पुकार
दुर्बल को धीरज जो देता है नित उदार
“क्यों सिर पर हाथ धरे आंसू तुम ढाल रहे ?
भाग्य के लिए किसकी जूतियां उठाते हो ?
मूढ़ ! व्यर्थ मन में हो लाचारी पाल रहे
दूसरा न हर कोई उद्धारक अपना हो !
यहाँ नहीं कोई भी बाधा प्रियोद्योग में
ग्रह-तारे सब तुम्हें सहायक सुयोग में
किसी को भी बिछाना न पत्थर या सिर्फ धूल
हो भी तो पूर्व-भाग्य में शायद शोकमूल
अन्यथा न कुछ भी हो कमी किसी के घर में
तेरेंगे सब सुख औ’ संतोष-सागर में”

यह पुकार उसकी जो नर उर में नारायण
दशदिशि में गुंजित है प्रतिध्वनि का पारायण

‘आया मैं, आया मैं !’ कौन कह रहा पुकार
इसमें है डाँट किसी को तो किसी को अधार।
“यहाँ अप्रपूजा का हृक्दार ना धनाढ्य
मालाएं फूल उसी को जो जन-हित-गुणाढ्य
कोई भी रोकेगा नहीं किसका भी मार्ग,

बँडहस्त दुर्मबांध देंगे नहीं पीड़ा-भाग
 न्यायदेवि ! स्वार्थ के कटाक्ष मत मानना
 शास्ता में जनता का पूरा विश्वास बना।
 नये नये उन्मेष बुद्धि के जहाँ फैले
 मनुज मात्र कल्याण-कारक हों सुहृदों के।”

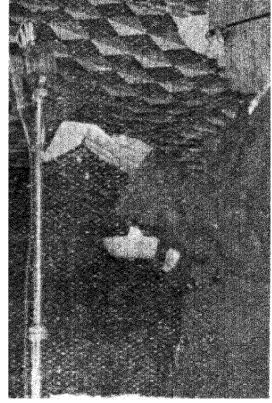
ललकार देता युगनिर्माता चोबदार
 सबको कहता है, रहो होशियार, होशियार !

‘आया मैं, आया मैं !’ कौन कह रहा पुकार
 जो कि क्षताकुल जन को दिव्य औषधोपचार
 “अब होंगे उद्यान कल तक के समरस्थान
 शस्त्रास्त्र होंगे बस ऋषिमुनि के अस्थि-दान
 कर्तव्य छोड़ नहीं कोई भी जाति, धर्म
 क्षेम दूसरे का यही अध्याहत एक मर्म
 संसृति के मंदिर में प्रभु के अवतार हित
 पुरुष और नारी दो वर्तिकाएं एकत्रित”

यह पुकार उसकी जो नर-उर में नारायण
 दशदिशि में गुंजित है प्रतिध्वनि का पारायण।

कवि : श्री जो० शंकर कुरुप

रूपांतरकार : श्री रामधारी सिंह दिनकर



उत्तर त्रावन्कोर में १९०० में जन्म । महाराजा कालेज, अर्नाकुलम् में संस्कृत और मलयालम के प्राध्यापक । समस्त केरल साहित्य परिषद् के मंत्री तथा 'परिषद्-पत्रिका' के संपादक । १९१७ में 'साहित्य-कौतुकम्' पहली पुस्तक छपी । बाद में इसके चार भाग छपे । अब तक बीस कविता संग्रह प्रकाशित हुए हैं, जिन में 'संध्या', 'निमिषम्', 'मुत्तुकल', 'चेङ्कदरिल्' आदि बहुत प्रसिद्ध हैं । आप प्रकृति के प्रेमी और प्रतीकवादी कवि के नाते केरल में प्रसिद्ध हैं । आप ने उमर खय्याम की रुबाइयों और 'मेघदूत' के मलयालम में अनुवाद किये । पता : महाराजा कालेज, अर्नाकुलम् । साहित्य अकादेमी के मलयालम सलाहकारी बोर्ड के सदस्य हैं ।



वन्दनं परयुक्

वन्दनं परयुक्, भारतांबिके, दैवं
तन् दयक्कहिंस तन्नसिधारयिल्क्कूटि
दूर दुष्करयात्र निर्वहिच्चिता, दीना—
कारयायालुं रक्तं मेय्यिल् निन्नोलिच्चालुं,

इन्नले पुच्छिच्चोरु राज्यलक्षिमकलेल्लां
 उन्नतात्भत स्नेहमधुरं पुणरवे,
 मंगल स्वातन्त्र्यत्तिन्नज्वलोज्ज्वलमाय
 मंजुल प्रभाततिलविडन्नेत्तिच्चेन्नु ।
 प्राचियुं प्रतीचियुं मुडक्कुं जयारवं
 वीचियाय्यन्नेत्ति मूक्कुन् हिमवाने !
 पौटर् तन् हन्नीडत्तिल् निन्नयन्नानिन्दडल्
 सौरमार्गतिलच्चेल्व् कोटि तन् चिरकिन्मेल् !
 रक्कदाहमान्नीरु सा!म्राज्यसिहत्तिन्टे
 शक्कवुं कुटिलवुंमायिरुन्नतां दण्ड्र
 काणुक, कोडिञ्जाता किटप्पु निरं मंडि
 त्ताण्णो चन्द्रक्कलपोलेयिप्पलरियिल ।
 इरुलिल् तिलंडिय कण्णुकल, चरित्रत्तिन्
 अरुक्किल्काणा मायुं रण्टु तारकल् पोले ।
 निन् मुग्धमाकुं कालिल्स्सटयाल् परुषमां
 तन् मुखमुर्मुम्भक्कोण्टावृद्ध मिह् निल्पू ।
 वन्यनीतिकलतु केवलं मरक्कुमो !
 धन्यमां निन् सौहार्दमन्नन्नु पुलर्त्तुमो !
 वन्दनं परयुक धर्मपालिके, देवं
 तन् दयक्कान्नन्दाश्रु गद्गद स्वरयायि
 पावने, पौरस्त्यमां दिड्मुखं तुटुक्कुन्
 तावक् स्वातन्त्र्यत्तिन् स्वच्छमामुदयत्तिल्
 एन्तिनिडने शोणशोणमाकुवान् ?—ओर्त्ताल्
 निन्तिरुवतियुते हृदय तकन्नु पो ।
 इन्नलेत्तिरुवटल् वरियेच्चट्टिच्चट्टि
 अन्नेटुं कडुमरत्तिकल् नावुकलाट्टि,
 आइरं करिन्तुरुंकरयिल् कूटित्तन्टे
 वायिटक्कट्टेक्काट्टिप्पुल्युं स्वेच्छातंत्रं
 विडुंडि ओरिच्च निन् प्रियपुत्ररिल् तन रत्तं
 ओड्डक्कुन्नतुण्णावामिप्पोडुमित्तिन् पिये ।

ग्रामवुं नगरवुं वयलुं काटुं मेटुं
 आ महाधीरन्मार् तन् विटरुं स्मृतिकलाल्
 अत्र तन्नितलुकल् वीशिटुं वर्ण्डलाल्;
 अवयिलत्तिडुं त्यागोन्माद सौरभंडलाल्
 इन्नु कोल्मयिर् कोल्वू, निन् कणिल् निन्नुं रण्टु-
 मून्नु निर्मल स्नेहानुग्रह कणिककल्
 पूतमां स्वातन्त्र्यत्ते श्वसिक्कान् जीविककात
 अश्वातराय वीणा वीरपुत्ररिलप्पोडिञ्जावू !
 वन्दनं पग्गुक वीरमातावे, दैवं-
 तन् दयक्कभिमानदीप्तममात्मावोटे !
 चंडल विधिकृतमेन्नुवेच्चहास्यत्तिन्
 तोंडल तान् तनिककन्नंकारमाय वारित्तुक्कि,
 भीरुवाय्-स्वातन्त्र्यमेन्नुच्चरिक्कुवान् पोलुं
 भीरुवाय्-तलर्न्ने निन् जीवितं मयंडुंपोल्
 निन्मान्य पुत्रन् वीर 'तिलकन्' स्वातन्त्र्य तन्
 जन्मावकाश तानेन्नाद्धमाय् प्रख्यापिक्के
 नुंडी निन्नात्मावु "यूणियन् जंक्को" टुन्न
 नटुतामत्युद्धतध्वजत्तिन् तरयोटे !
 एंकिलुमतिन् कट पुडुडील तिन्निरुल्
 तंकिटुं निडल् नीडू निन् चरित्रत्तिल्क्कूटि ।
 कूशमामतिन्नटि कुतिरान् स्वरक्त नी
 धारधारयायेत्र पकन्नीलितिल्प्पन्ने !
 एत्रयो किरीटत्तिन् कल्लटिच्चुरप्पिच्चोर्
 अत्तरक्कुमेलेत्र साहस तकन्नील !
 धर्मत्तिन् नवायुधशालयिल् निन्नुं पिन्ने
 कर्मकोविदनाय राष्ट्रीयमहायोगि
 यालिनाल् मुरियाते, तीडिनाल् दहिककाते
 वाच्चिट्टुमोरायुधं पुतुतायटुत्ति ।
 विनयं पठिच्च पोलक्कोटियिता, धीर
 सुनये, निन पादत्तिलत्तल ताडिति निन्नल्लो ।

वन्दनं परयुक्त विश्ववन्दिते दैव
 तन् दयवकाशाफुल्ल स्वच्छ मानसत्तोटे !
 कालं निन् धर्माज्जित स्वातंत्र्यमुद्घोषिष्पान्
 नील निर्मल शब्दगुणकाकाशत्तिने,
 नोक्कुक् महाघण्टयाक्कि वार्त्ततु, नालु
 दिक्कुक्कलिरुल तुणियतिल निन्नूर्त्तीट्टुन्नु
 श्रोलमा मणियता जालुन्नु महाविश्व
 शाल तन् मध्यत्तिकल् प्रियदर्शनमायि
 मुम्परिजिट्टिल्लात्त मादकस्वातंत्र्यत्तिन्
 सम्पन्न पानत्ताल कूत्ताटुमोरो काट्टुं
 चलिक्केच्चलिक्के निन् पूर्ण मगलत्तिन्ट
 ओलि तान् तुलुम्पुन्नु चक्रवालत्तिन् वक्किल्
 वोर मद्दल मुखनिग्गलक्कालारावो
 दारमाक्कुन्नु मून्नु सागरमीस्सन्दर्भ ।
 शारद दिनोदयश्री निवर्त्तुन्नु स्वच्छ
 गौरमां वेलिच्चत्तिन् वेण्कोट्टक्कुट मन्द
 उन्नत स्वातंत्र्यत्तिन् रत्न पीठत्त, देवो
 वन्नलंकरिच्चालुं ! निन् नाम मुड्डट्टे
 नूरु भाषयिल्, नूरु नूरु गानत्तिल्, नूरु
 नूरु नूरन्ताराष्ट्र मण्डलडलिलम्मे !
 वन्दनं परयुक्त रजितविश्वे, दैव
 तन् दयक्कुल्क्कन्धर सुन्दराननत्तोटे !
 अंब, निन् स्वातंत्र्यत्तिन् चिह्नत्तप्पारिक्कुन्नि
 तंबरं नीलच्छायमाय निन् कवचत्तिल्
 उन्मुखं हिमवानुं विन्ध्यनुं मलयनुं
 नम्मटे पताकयुल्पुलकं दर्शिककट्टु ।
 रांडुमिन्नविटत्तयभिमानत्तोटोण्ण
 पोंडुमी त्रिवर्णं डल् चक्रांकमनोज्ञं डल्
 लीलयिलपूर्वाभिमानत्तिल् पाटुं मलं
 चोलकल् पोलुं मारिल् जेरि मैल् कत्तीट्टुन्नु

नालेयी स्वातत्र्यत्तिन् चिरकिन् काट्टिट्टिट्ट
 नीलेयेडलयाडि हर्षत्ताल् विजृम्भिकु
 नालेयीस्समाधान वाग्दानं कण्टिट्टेरे
 नाटुकलाशा पिच्छं विगति नृत्तं चैय्युं
 ई अजय्यतयुटे निडल काणुम्पोल तोक्किन्
 वाय तन्नत्तान् पोत्ति निल्कुमक्रमि राज्यं
 भयमे दूरे दूरेयाशंके ! नवयुगो-
 दयमायतिन् रश्मिपूशुमीक्काटि कण्टो ?
 मेटुकल्, वयलुकल् काटुकल्, कटलुकल्,
 नाटुकल्, नगरड्लोक्केयुं मेले मेले ।
 ईयन्ग्रहं नूकु कोटि तन् धीर स्निग्ध-
 छाययिल् प्रापिक्कट्टे शान्तियुमैश्वर्यवुं !
 वन्दनं पर्युक राष्ट्रन्यायिके, दैवं
 तन् दयक्कभंगुर मगल जयिच्चालुं !!



करुणामय की करुणा को शतशः धन्यवाद

करुणामय की करुणा को शतशः धन्यवाद ।
 हे जननि ! अहिंसा की असिधारा पर पग धर
 दुष्कर यात्रा कर पूर्ण श्रमित-पद, क्षाम, क्षीण,
 अन्ततः, रक्तपंकिल गात्रे ! तू पहुँच गई
 उस ओर, जहाँ मुसकाता है—
 उज्ज्वल स्वतन्त्रता का मंजुल-मंगल प्रभात

सारी वसुधा आनन्दलीन,
 है गूँज रहा स्वागत में हर्ष विकल कलकल
 उल्लसित पूर्व पश्चिम के ये गोलाधं युगल,
 बाएँ-बाएँ उठ रही जय-ध्वनि की तरंग,
 उन्नत हिमाद्रि का भाल भौंगता जाता है ।

उठ रहा तिरंगा आच्छादित कर सौर-मार्ग,
 नागत जन-मन में ऊर्ध्वगमन की अभिलाषा ।
 जनता के हृत्पिण्ड से कढ़ आनन्द-विहग
 ऊपर भंडे के पास पहुँच मँडराते हैं ।

वह उधर क्षितिज के पास अधोमुख कान्तिहीन,
 जो डूब रही है मन्द प्रभा,
 वह नहीं चन्द्र की कला,
 कुटिल शोणित-पिपासु साम्राज्यवाद की दंष्ट्रा है ।
 वे दो तारे जो दीख रहे हैं अस्तमान,
 आखें वे इसी दनुज की हैं
 अधियाले में डूबी प्रकाश की कणिकाएं,
 इतिहास-गर्त में पड़े हुए अंगारों सी ।

कल तक जो हँसी उड़ाती थीं,
 तुझको पीड़ा पहुँचाती थीं,
 वे राजलक्ष्मियां आज चकित-विस्मित विभोर ।
 घर-घर से बाँह बढ़ाती हैं,
 तुझको अपनी अग्रजा मान,
 फूलों के हार पिन्हाती हैं ।

मां ! देख, मुग्ध यह वृद्ध सिंह
 कैसे चरणों से सटा खड़ा,
 तेरे पद को निज जिह्वा से सहलाता है ।
 पर, हाय ! कहीं यह वन्य जीव
 रक्ताक्त जिघांसा को तजकर,
 करता भारत का शीलग्रहण,
 बन पाता तेरा अमिट मित्र ।

करुणामय की करुणा को शतशः धन्यवाद ।
 हे धर्मपालिके ! परम पावनी मां तेरे,
 सौभाग्य-उदय से यह कैसे लाली छिटकी,
 संपूर्ण पूर्व-जग का आनन जगमगा उठा ।

है कहां आज स्वेच्छाचारी वह कुटिल तंत्र,
 जो अंध कालक्षों के भीतर जीभ खोल,

अथवा फाँसी के तहतों पर फण फुला फुला,
 तेरे निरीह पुत्रों का शोणित पोता था ?
 हो गये तिरोहित कालनाग,
 हो गये तिरोहित मां तेरे वे वीर तनय,
 जिनके शोणित से भाग्य देश भर का जागा,
 पर, हाय ! जिन्होंने स्वाधीनता नहीं देखी ।

उन वीर हुतात्माओं की स्मृति के रुचिर फूल
 उन धीर शहीदों की पंखड़ियों की लाली,
 उन अजय योगियों के जीवन की त्याग सुरभि,
 वे मिटे नहीं, सब जीवित हैं ।
 उनसे ही तो सुरभित हैं अपने ग्राम-नगर,
 उनसे ही तो शोभित हैं ये वन-विपिन-खेत,
 भुज उठा खड़े हैं उनकी पूजा में पहाड़,
 नदियाँ गुण गानी हुई सरकती जाती हैं ।
 मां आज पुण्य का पर्व, शहीदों की स्मृति में
 अपने कृतज्ञ दो अश्रुबिन्दु ढल जाने दे ।

करुणामय की करुणा को शतशः धन्यवाद ।
 वह भी था मातः एक समय
 जब हम जड़ता में पड़े हुए अवसाद ग्रस्त,
 दासत्व-पाश को कह विधि का अविचल विधान
 सोये थे हो निश्चेष्ट,
 मुक्ति के हित आयास न करते थे
 ऐसी कदर्यता थी, मुख से
 स्वातंत्र्य शब्द कहने में भी हम डरते थे ।
 तब फटी भीरुता की बदली,
 उच्चरित हुआ गंगाधर के दुर्वार कंठ से महासत्य,
 केसरी तिलक की बाणी में,
 जाग्रत स्वदेश का कंठीरव
 प्लुत में चिंगार पुकार उठाः—
 'स्वातंत्र्य हमारा जन्म सिद्ध अधिकार ।'
 इसे जैसे भी हो, हम पायेंगे,

मस्तक का दे बलिदान,
मुक्ति की मणि का मोल चुकायेंगे ।

फट गई भीरुता की बदली,
फट गया गहन तम किमाकार
नदियों का जल खलभला उठा,
करवट लेकर जागे पहाड़ ।
यूनियन जैक तिलमिला उठा,
ध्वज काँपा नीचे नींव हिली,
सत्ता का आनन भ्लान हुआ,
जनता को नूतन ज्योति मिली ।
तब से तूने जाने कितने पावक-शायक संधान किये,
जानें होमें कितने सपूत,
कितने किशोर बलिदान किये ।

यूनियन जैक का उन्मूलन, पर हो न सका ।
सोने चाँदी से पिटा हुआ ध्वजपिंड मूल में था दृढ़तर,
थे किये हुए उसको अजेय,
चरणों को कस कर गहे हुए निर्लज्ज किरीटों के पत्थर ।

इतने में सत्यव्रती योगी,
कर्मठता के पूर्णावतार,
गांधी आये, खुल गया
धर्म के शस्त्रालय का नया द्वार ।

यह धर्मशस्त्र जो नहीं आग में जलता है,
जिसको न काट सकतीं लोहे की तलवारें,
जो अयस और प्रस्तर, दोनों पर ही, समगति से चलता है ।
है धन्य वीर जो यह धर्मशस्त्र उठाता है,
सौ बार धन्य वह पुरुष अहिंसा के सम्मुख
जो खड्ग फेंक लज्जित हो शीश झुकाता है ।
यह उसी पुण्यमय महाशस्त्र का फल सुन्दर,
जो ध्वजा शूलवत् कभी हृदय में चुभती थी,
लहराती है वह विनयशीलता में भर कर ।

करुणामय की करुणा को शतशः धन्यवाद ।
 हे जगत्पूजिते विश्वधाम के मध्य-स्थित,
 घंटावत् रवगुणमय व्यापक यह महाव्योम,
 तेरी महिमा नित गाता है,
 त्रिभुवन को तेरी धर्मार्जित पावन स्वतंत्रता का संदेश सुनाता है ।

बह रहा क्षितिज को छू उद्वेलित मुक्त पवन,
 वन-राजि मुक्त हो सजती है,
 द्रुम के पत्तों में अनिल नहीं सीत्कार रहा,
 हरियाली में मांगलिक बीन यह बजती है ।
 तीनों समुद्र हुंकार रहे गंभीर नाद,
 गर्जन में भेरी की गत है ।
 उस मन्दिर के ये ताल भव्य जिसका किरीट
 श्रवनीतल का सर्वोच्च शृंग हिम-पर्वत है ।

प्रस्तुत स्वतंत्रता का यह मणिमय सिंहासन,
 बंठो मां ! हम मिल कर आरती सजायेंगे,
 नाना भाषाओं में लिखेंगे एक नाम,
 नाना छन्दों में एक गीत हम गायेंगे ।

करुणामय की करुणा को शतशः धन्यवाद ।
 मातः तेरे चक्रांक-केतु को व्योमदेव
 सादर मुनील निज कंचुक पर लहराते है,
 मस्तक उन्नत कर मलय, हिमालय, विंध्याचल,
 भंडे की छवि को देख छके रह जाते है ।

स्वातंत्र्य-गरुड़ का पक्ष तीन रंगों वाला,
 इसके भोंके सर्वत्र सौख्य सरसायेंगे,
 जिस दिवस पड़ेगी भूतल पर छाया इसकी,
 पुलकित प्रफुल्ल सातों समुद्र लहरायेंगे ।

यह शान्ति सुन्दरी के हाथों का इन्द्रधनुष,
 कल इसे देख आशा के रंजित पिच्छ खोल,
 नाचेंगे राष्ट्रों के मयूर, उत्सव होगा,
 इस उर्विजेयता की छाया को देख भीत,

अत्याचारी भुक्त जायेंगे ।
बन्दूकों के मुख अनायास मुद्रित होंगे,
मुस्तायेगा संसार शान्ति की छाया में
निश्चय विमुक्त युद्ध के रोग से भव होगा ।

हो दूर भविष्यत् की चिन्ते, मानस के भय,
री आशंके, अब और नहीं आतंक जगा ।
हो चुका उदित प्राची के तट पर युग नवीन,
यह केतु उसी की किरणों में लहराता है ।
इस महाकेतु के नीचे सारे ग्राम-नगर,
सागर-उपसागर, शैल शृंग वन-विपिन-खेत
युग युग भोगें सुख-शान्ति स्नेह में बँधे हुए ।

करुणामय की करुणा को शतशः धन्यवाद ।
भारत का मन सारी वसुधा से एक रहे ।
अग्नि राष्ट्र-नायिके, मंगलमयि, तेरा जय हो !

हिन्दी

कवि : श्री मथिलीशरण गुप्त



जन्म १८८६, चिरगाँव, झांसी। सन् १९०७ से 'सर-स्वती' के माध्यम से कविता के क्षेत्र में प्रवेश किया। 'भारत भारती' द्वारा प्रचुर ख्याति मिली। अनेक उपेक्षित विषयों को लेकर प्रबन्ध काव्यों की रचना की। साकेत, यशोधरा, पंचवटी, जयद्रथ-वध, कावा और कर्बला, अर्जन और विसर्जन, सिद्धराज, भंकार और द्वापर प्रमुख काव्यग्रंथ हैं। बंगला के प्रसिद्ध काव्य मेघनाद-वध, तथा विरहिणी-व्रजांगना और पलासी का युद्ध, तथा अंगरेज़ी से रुवाईयात उमर खैयाम आदि का अनुवाद किया। 'जयभारत' नामक बृहद् काव्यग्रंथ हाल ही में प्रकाशित हुआ है। आजकल राज्य-सभा के सदस्य हैं। नार्थ एवेन्यू, नई दिल्ली में रहते हैं।



ध्वज-वन्दना

निज विजय पताका फहरे,

मुक्त वायु-मण्डल में अपनी मानस-लहरी लहरे।

जय मैत्री करुणा-धारामय यह ध्वजचक्र हमारा,

कभी क्रांति का सूर्य यही है, कभी शान्ति शशितारा।

हमें विजय का सूत्र मिला है, इसी चक्र के द्वारा,

रक्षक यही, सुदर्शन अपना, किरण कुसुम-सा प्यारा।

कालचक्र यह हाथ हमारे, लक्ष्य क्यों न थक थहरे ?

निज विजय पताका फहरे।

कर्मक्षेत्र हरा है अपना, जान शुभ्र मनमाना,
बलि बलवती विनीत भक्ति का कल केसरिया बाना ।
इस त्रियोग के तोर्थराज में हमें स्वधर्म निभाना,
अपनी स्वतंत्रता से सबका मुक्तिमंत्र है पाना ।

सब समान भागी जोवन के यही घोषणा घहरे,
निज विजय पताका फहरे ।

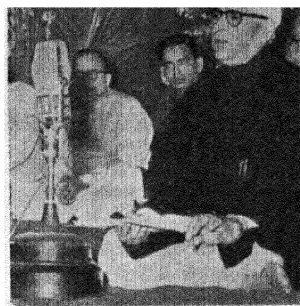
त्याग हमारा धर्म, किन्तु हम हरण कभी न सहेंगे,
दानवत्व से मानवता का वरण कभी न सहेंगे ।
किसी आततायो का तुष्टीकरण कभी न सहेंगे,
और कहीं भी व्यर्थ किसी का मरण कभी न सहेंगे ।

वह नरता ही क्या, बर्बरता जिसके आगे ठहरे ?
निज विजय पताका फहरे ।

इस ध्वज पर जूझे स्वजनों पर ध्यान जहाँ जाता है,
मस्तक ऊँचा होने पर भी मन भर-भर आता है ।
निर्भय मरण वरण कर ही नर अमर कीर्ति पाता है,
ऐसे पुत्रों की ही आशा रखती भू-माता है ।

भू-माता का यह अंचल-पट छाया करके छहरे,
निज विजय पताका फहरे ।

कवि : श्री बालकृष्ण शर्मा 'नवीन'



जन्म १८६७, मयाना गाँव, उज्जैन । राष्ट्रीय संक्रांति-काल में 'विप्लव गान' शीर्षक रचना बहुत लोकप्रिय हुई । रचनाएं कुंकुम, अपलक और क्वासि नामक संग्रहों में संगृहीत हैं । आचार्य विनोबा भावे के भूदान-यज्ञ से प्रभावित होकर विनोबा-स्तवन की रचना की है । कार्यक्षेत्र आदि से ही कानपुर रहा है । देश के स्वतंत्रता-संग्राम में प्रमुख भाग लिया । आजकल संसत्सदस्य हैं, ५ विंडसर प्लेस नई दिल्ली में रहते हैं ।



जन-तारिणि, मन-दैन्य-हरणि, हे !

जन-तारिणि, मन दैन्य-हरणि, हे !

विभु-भुज-वन्दिनि, दृग-आनन्दिनि, तिमिर-निकन्दनि, ज्ञान-तरणि, हे !

जन-तारिणि, मन-दैन्य-हरणि, हे !

१

जय जय, हे गुर्वाणि मातृ भू, जयतु, जयतु, हे परम तपस्विनि,

जय, हे भक्ति मालिके, जय, हे जग पालिके, अजस्र-पयस्विनि ।

राम-कृष्ण-जिनदेव तथागत-जननि, जयतु हे गान्धी-प्रसविनि,

जय, ध्रुवस्वामिनि, मोक्ष-प्रदायिनि, जय, गंगा-तरणिजा सरणि हे !

जन-तारिणि, मन-दैन्य-हरणि हे !

ओ माँ ! तव अंचल में संचित युग-युग का इतिहास अमर, चिर,
तव मलयानिल धोर श्वास में सन्तत गति उल्लास अजर, स्थिर ।
ध्यान निमीलित तव दृग-पुट में आए हैं ये नवल स्वप्न घिर,
हम क्षण-भंगुर, तव प्रसाद से बने सनातन मातृ-धरणि हे !

जन तारिणि, मन-दैन्य-हरणि, हे !

माता किया तुम्हीं ने तो था सर्वप्रथम दिक्-काल-अतिक्रमण,
और, तुम्हीं ने रहसि किया था अनाद्यन्त के संग सन्तरण ।
तुम कितने ही मन्वन्तर-गिरि-शृंगों का कर चुकीं संभ्रमण,
जग ने तुमही से पाया है मुक्ति-मंत्र, कल्याण-करणि, हे !

जन-तारिणि, मन-दैन्य-हरणि, हे !

वीत-रागिणी तुम अनुरागिणि, अवलोको अपने ये जन-गण,
इनका हिय भक्तभूरो, ओ माँ, कर दो सत्-प्रेरित इनके मन ।
भस्मसात् कर दो क्षण में तुम, ये निम्नगा-वृत्ति के कर्षण,
आज दीप्त कर दो वेदी तुम अग्नि-पुंज हे, यज्ञ-अरणि, हे !

जन-तारिणि, मन-दैन्य-हरणि, हे !

बल दो, माँ, निष्कासित कर दें हम भीतर का गरल हलाहल,
बल दो, शान्त कर सकें हम निज अन्तरतर की शोणित-खल-भल ।
नव विहान वेला में हम भी बनें आज नव मानव निश्छल,
तव अतीत के हम प्रतीक हों, यह बल दो नव-भाव-भरणि, हे !

जन-तारिणि मन-दैन्य-हरणि, हे !

आंखों में हो तेज, भुजों में शक्ति, हृदय में दृढ़ता अविचल,
कर्मों में हो यज्ञ-भावना, मन में हो सन्निष्ठा का बल ।
प्राणों को नव-सृजन-प्रेरणा उत्प्राणित करती हो पल-पल,
यह वर दो अपने पुत्रों को, धर्म-धारिणी, चित्त-विहरणि हे ।

जन-तारिणि, मन-दैन्य-हरणि हे !

कवि : श्री सुमित्रानंदन पंत



जन्म १९०० में, कौसानी, जिला अल्मोड़ा में। शिक्षा बनारस तथा इलाहाबाद में पाई। असहयोग आंदोलन में पढ़ाई छोड़ दी। तब से अनवरत साहित्य-सेवा कर रहे हैं। रचनाएं : उच्छ्वास, वीणा, ग्रन्थि, पल्लव, गुंजन, युगान्त, युगवाणी, पल्लविनी, स्वर्णकिरण, स्वर्णधूलि, उत्तरा, रजत शिखर, शिल्पी और अतिमा काव्य-संग्रह हैं। ज्योत्स्ना नाटक है। गद्य में कहानियों का एक संग्रह 'पाँच कहानियाँ' तथा 'गद्यपथ' प्रकाशित किया है। नवीन कविता-संग्रह अतिमा अभी प्रकाशित हुआ है। आजकल आकाशवाणी के हिन्दी कार्यक्रमों के प्रमुख निर्देशक हैं। इलाहाबाद में रहते हैं।



भारत दर्शन

(भारत के सांस्कृतिक कार्यक्रम को श्रद्धांजलि)
आज सूक्ष्म दर्शन से जगता, मनोनयन में,
भारत का आनन हिरण्य स्मित,—जीवन कण के
तम से पर, आदित्य वर्ण उसकी आभा का
भूत शिखर के चरण चूड़ सा शत सूर्योज्वल !

ह्लास नाश से रहित, अमर चेतना शक्तियाँ,
वह अन्तर्हित किये हृदय में, सूक्ष्म, सूक्ष्मतम,

गुह्य रहस, वर्णनातीत जग के मंगल हित ।

उसके अन्तरतम के ज्योतिर्मय शतदल पर
स्वयं खड़े हैं, सत्य चरण धर, अविनाशी प्रभु,
तेजोमय, जाज्वल्य, हिरण्य-शैल से अद्भुत !
पुरुष पुरातन...पुरुष सनातन, विश्व मोहिनी,
निज वंशी के सृजननाद से जगा अचित् से,
स्वर्गिक पात्रक के असंख्य चैतन्य लोक स्मित,
बरसा रहे अनन्त शून्य में, स्वरलय वर्णित,
कोटि सूक्ष्म सौंदर्य प्रेय आनन्द के भुवन,
प्राणों की आशा, आकांक्षा से चिर उर्ध्वर
जीवन मन के स्वर्ग, तृप्ति के सुख में नीरव !
रूप गंध रस स्पर्श शब्द के बिम्ब जगत बहु
निज असीम वंभव में अक्षय, दमक रहे जो,
सप्त चेतनाओं के रंग स्वरो में छहरे !

संयम तप के स्वर्ण शुभ्र नीहार से जड़ित,
भारत के चेतना शृंग पर, ध्यान मौन रव,
परम पुरुष वह नृत्य कर रहे, सृजन हर्ष की
विस्मृति में लय ! जिनके अति चेतन प्रकाश से
शोभा सुषमा की सहस्र दीपित मरीचियां
आभा की आभाएँ, छाया की छायाएँ,
दिशा काल में फूट रहीं, शत सुर धनुओं के,
रंगों की आलोक क्रान्ति से सृष्टि चकित कर !

भर झर पड़ते सतत, सत्य, शिव सुन्दर उनके
महाकाल औ' महादिशा को चेतनता से
मुग्ध चमत्कृत कर,—रोमांचित दिव्य विभव से !

आज धरा के पतों के इस तपस क्षेत्र में,
जीवन तृष्णा, प्राण सुधा औ' मनोदाह से ।

क्षुब्ध, दग्ध, जर्जर, जनगण चीत्कार कर रहे,
घृणा, द्वेष, स्पर्धा से पीड़ित वन-पशूओं से,
बिखर गया मानव का मन अनुवीक्षण पथ से,
वहिरजगत में, स्थूल भूत विज्ञान से भ्रमित !
अन्तर्दृष्टि विहीन, मनुज निज अन्तर्जग के
वैभव से अनभिज्ञ, हृदय से शून्य रिक्त हैं !
आज आत्मघाती मन अपने ही हाथों से
मनुजजाति का महामरण निर्माण कर रहा
भौतिक रासायनिक चमत्कारों से अगणित !
तर्क-नियन्त्रित यांत्रिकता के पद-प्रहार से
ध्वस्त हो रहे, अन्तर्मन के सूक्ष्म संगठन ।
सत्यों के, आदर्शों के, भावों, स्वप्नों के,
श्रद्धा, विश्वासों के, संयम तप साधन के,
मनुष्यत्त्व निर्भर है जिन ज्योतिस्तंभों पर !

ऐसे मरणोन्मुख जग को कहता मेरा मन,
और कौन दे सकता, नव-जीवन, आश्वासन,
शांति, तृप्ति, निज अंतर्जीवन के प्रवाह से
भारत के अतिरिक्त आज ? जो शाश्वत, अक्षर
अंतर ऐश्वर्यों का ईश्वर है वसुधा पर !
कहता मेरा मन, भारत ही के मंगल से,
भू-मंगल, जन-मंगल, देवों का मंगल है !



कवि : श्री रामधारी सिंह दिनकर

जन्म १९०८ में, मुंगेर, बिहार में। प्रारम्भिक रचनाएं वीर बाला और प्रण-भंग विद्यार्थी-जीवनकाल में कीं। अनंतर 'रेणुका' द्वारा ख्याति मिली। अन्य रचनाएं हैं हुंकार, रसवंती, सामधेनी, द्वंद्वगीत, रश्मिरथी, नील-कुसुम आदि। 'कुरुक्षेत्र' प्रबन्धकाव्य है, जो बहुत प्रसिद्ध हुआ। 'अर्धनारीश्वर' और 'मिट्टी की ओर' गद्य रचनाएं हैं। बिहार में अनेक पदों पर रहने के उपरान्त अब दिनकर ने सार्वजनिक जीवन में प्रवेश किया है। आजकल संसद् के सदस्य हैं, और साउथ ऐवेन्यू नई दिल्ली में रहते हैं।



हिमालय का संदेश

वृथा मत लो भारत का नाम।
मानचित्र में जो मिलता है, नहीं देश भारत है,
भू पर नहीं, मनो में ही, बस, कहीं शेष भारत है।
भारत एक स्वप्न, भू को ऊपर ले जानेवाला,
भारत एक विचार, स्वर्ग को भू पर लानेवाला।

भारत एक भाव, जिसको पाकर मनुष्य जगता है,
 भारत एक जलज, जिस पर जल का न दाग लगता है।
 भारत है संज्ञा विराग की, उज्ज्वल आत्म-उदय की,
 भारत है आभा मनुष्य की सबसे बड़ी विजय की।
 भारत है भावना दाह जग-जीवन का हरने की,
 भारत है कल्पना मनुज को राग-मूक्त करने की।
 जहाँ कहीं एकता अखण्डित, जहाँ प्रेम का म्वर है,
 देश-देश में खड़ा वहाँ भारत जीवित, भास्वर ह।
 भारत वहाँ, जहाँ जीवनसाधना नहीं है भ्रम में,
 धाराओं को समाधान है मिला हुआ संगम में।
 जहाँ त्याग माधुर्यपूर्ण हो, जहाँ भोग निष्काम,
 समरस हो कामना, वही भारत को करो प्रणाम।
 वृथा मत लो भारत का नाम।

साधना इस व्रत की भारी।

पग-पग पर हिंसा की ज्वाला, चारों ओर गरल है,
 मन को बांध शान्ति का पालन करना नहीं सरल है।
 तब भी जो नर-वीर असिब्रत दारुण पाल सकेंगे,
 वसुधा को विष के विवर्त से वही निकाल सकेंगे।
 मना रहे क्यों, यह व्रतपाली केवल भारत होगा,
 शेष विश्व हिंसा-लिप्सा में, इसी भांति, रत होगा।
 किसी एक को नहीं, बदलना होगा साथ सभी को,
 करना होगा ग्रहण शील भारत का निखिल मही को।
 शमित करेगा कौन वह्नि प्रहरी का जाल बिछाकर,
 रोकेगा विस्फोट विश्व को बल से कौन दबा कर।
 तब उतरेगी शान्ति, मनुज का मन जब कोमल होगा,
 जहाँ आज है गरल, वहाँ शीतल गंगाजल होगा।
 देश-देश में जाग उठेंगे जिस दिन नर-नारी,
 साधना इस व्रत की भारी।

धर्म को, श्रद्धा को मत त्यागो ।

शील मुकुट नरता का, सबसे बड़ी भव्यता का है,
नही धर्म से बढ़कर कोई मित्र सभ्यता का है ।
निरी बुद्धि के लिए भावना का मत दलन करो रे,
जो अदृश्य प्रहरी है, उससे भी तो कभी डरो रे ।
शान्ति चाहते हो तो पहले सुमति शून्य से मांगो,
नवयुग के प्राणियों ! ऊर्ध्वमुख जागो, जागो, जागो ।
धर्म को, श्रद्धा को मत त्यागो ।

